THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_178979

UNIVERSAL
LIBRARY

Osmania University Library

Call No. H86 K19N

Accession No. GH88

Author नेहरू - मुकर्जी

Title काश्मीर ब्यूरो आफ इन्फार्मेशन

This book should be returned on or before the date last marked below.

भाग १

नेहरू-मुकर्जी पत्र-व्यवहार

डा० मुकर्जी का पत्र श्री नेहरू के नाम

७७, आशुतोष मुकर्जी रोड,
कलकत्ता–२५,
९ जनवरी, १९५३

प्रिय जवाहरलाल जी,

क्या मैं आप को जम्मू की स्थिति पर सम्बोधित करने का साहस कर सकता हूं? हम लोगों ने इस विषय पर कानपुर में भारतीय जन संघ के अधिवेशन में वाद-विवाद किया था और सर्व-सम्मति से यह निश्चय हुआ था कि मैं आप से और शेख अब्दुल्ला से इस के बारे में सीधा मिलूं। मैं जानता हूं कि आप हम लोगों में से बहुतों से इस विषय पर सहमत नहीं हैं। फिर भी मैं यह पत्र आप को इस आशा से लिख रहा हूं कि आप खुले दिल से इस पर विचार करेंगे और उन लोगों का दृष्टिकोण, जो इस विषय में आप से असहमत हों, समझने का प्रयत्न करेंगे। यह बहुत जरूरी है कि उन हालतों पर, जिन के द्वारा वर्तमान आन्दोलन का जन्म हुआ है, फिर से निष्पक्ष विचार किया जाय और शीघ्र शान्तिपूर्ण समझौते पर पहुंचने के लिये, जो कि सभी के लिये उचित एवं उपयुक्त होगा, कोई कोशिश उठा न रखी जाय।

यद्यपि आन्दोलन को शुरू हुए ६ सप्ताह से अधिक हो गया है, फिर भी इस का जोर कम होने के लक्षण नहीं दिखाई दे रहे हैं। यह दूर दूर तक फैल गया है और इस को गांवों और शहरों के रहने वाले बहुसंख्यक लोगों का समर्थन मिल रहा है, यद्यपि यह स्पष्ट है कि ऐसे सभी लोग प्रजा-परिषद् के सदस्य नहीं हैं।

यह कहना सही नहीं कि इस आन्दोलन को ऐसी संस्थाओं अथवा व्यक्ति-समूहों द्वारा, जो कि जम्मू और काश्मीर राज्य के बाहर रहते हैं, उत्तेजना मिली है। जो मामले उठाये गये हैं उन का सीधा सम्बन्ध वहां की जनता से है तथा आन्दोलन के पथ प्रदर्शन का उत्तरदायित्व उन के अपने प्रतिनिधियों पर है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हम में से बहुतों ने उस उद्देश्य के प्रति, जिस के लिये इस संघर्ष का आरम्भ हुआ है, अपनी सहानुभूति प्रकट की है क्यों कि हम हृदय से यह अनुभव करते हैं कि यह कार्य न्यायसंगत एवं उपयुक्त है। परन्तु कष्टों के प्रहार को अभी तक मुख्यतः वहां के रहने वालों को ही सहना पड़ा है जो मुख्यतः अपने ही साधनों पर निर्भर रहे हैं।

यह भी कहना सही नहीं है कि आन्दोलन के संचालकों ने असावधानी से कार्य किया है और कोई संकट उत्पन्न कर दिया है। प्रजा परिषद् के नेताओं तथा अन्य लोगों ने वैधानिक उपायों द्वारा सौहार्दपूर्ण समझौता करने की बार बार कोशिश की है। डा० राजेन्द्र प्रसाद, आप, राज्यों के मंत्रियों तथा शेख अब्दुल्ला के पास प्रतिनिधि भेजे गये। उन में से कुछ सज्जनों से भेंट की गई। परन्तु अधिकांश मौकों पर उन से भेंट करना स्वीकार नहीं किया गया। समय-समय पर सम्मेलनों का आयोजन किया गया और प्रजा परिषद् तथा आन्दोलन के समर्थकों के दृष्टिकोणों का, भली भांति विचार करने के बाद सार्वजनिक रूप से समर्थन किया गया। पर स्पष्टतः सम्बन्धित अधिकारियों

ने जनमत की इन अभिव्यक्तियों की परवाह न की और उन का तिरस्कार तक किया गया। दूसरी ओर, कुछ ऐसे मामलों को जिन के विषय में बडा तीव्र वाद-विवाद उठ खडा हुआ था, अधिकारियों ने अत्यधिक शीघ्रता से आगे बढाया जिस के परिणामस्वरूप संकट और भी शीघ्र आ उपस्थित हुआ ।

आन्दोलन के सचालको और समर्थकों के खिलाफ हिंसा, हथियारों के इस्तेमाल और ध्वंसात्मक कार्यो को करने का आरोप खुल कर लगाया गया है। इस का दृढता के साथ खण्डन किया गया है। अगर इस मामले की तह तक पहुचना है, तो इन आरोपो की जाच किन्ही निष्पक्ष अधिकारियो को सौपना चाहिये। प्रजा परिषद् के प्रतिनिधियो ने ऐलान कर दिया है कि वे स्वतत्र जाच के लिये को तैयार हैं। अधिकारियो द्वारा स्वय जो हिंसात्मक कार्य किये गये हैं उन के औचित्य को सिद्ध करने के लिये उन्हो ने बार-बार हिसात्मक तरीको के इस्तेमाल की बात उठाई है।

पिछले ६ हफ्ते के अन्दर हम ने दमन का लगातार दौरदौरा देखा है। वस्तुत: आप ने पार्लियामेंट में यहां तक कहा कि अगर इस मामले को आप के ऊपर छोड दिया गया होता तो आप इस से भी अधिक जोरदार उपायो को काम मे लाते और आन्दोलन को दबा देते। पर हम लोगो के पास जो खबरे पहुच रही हैं वे इस के विपरीत हैं। जब कि सरकारी रिपोर्टो मे आन्दोलन की व्यापकता और दमन की सीमा को कम कर के बताने की कोशिश की गई है, गैर-सरकारी सूत्रो से प्राप्त सूचनाओ से कुछ दूसरी ही बातों का पता चलता है। यह मालूम हुआ है कि लग भग १,३०० आदमियो को कैद किया गया है; लाठी, गोली, अश्रु-गैस वगैरह का इस्तेमाल किया गया है; कैदियो को बहुत कम कपड़े पहिना कर बहुत ही ठंडी जगहों को भेजा गया है, और जायदादों को जब्त कर लिया गया है। पर इन सब तरीकों के इस्तेमाल से भी आन्दोलन को कुचला नही जा सका है, बल्कि इन से इस का जोर और भी बढ़ा है।

अब वह समय आ गया है कि आप और शेख अब्दुल्ला दोनो ही इस बात को महसूस करे कि यह आन्दोलन जोर-जबरदस्ती या दमन से कुचला नही जा सकता। कुछ बुनियादी मागे पेश की गई है और कुछ भय और सदेह प्रकट किये गए है। इन सब के बारे मे उचित ढग से निर्णय होना चाहिये। आपने अपने हाल के कुछ भाषणो म इस बात पर जोर दिया है जनता और सरकार एक दूसरे के दृष्टिकोण का आदर करे, परस्पर सहिष्णु बने, तथा सरकार जनता का विश्वास सौहार्द पूर्वक और समझ-बूझ कर प्राप्त करने का प्रयत्न करे। परन्तु जब वास्तविक शासन का मौका आता है तो ऐसा मालूम पडता है कि वही पुराने तरीके, जो ब्रिटिश हुकूमत के लिए कलक-स्वरूप थे, अब भी काम मे लाये जा रहे है, और कभी-कभी तो पहले की अपेक्षा कही अधिक जोरो के साथ भी। जम्मू और काश्मीर की समस्या किसी दल-विशेष की बात नही समझी जानी चाहिये। यह एक राष्ट्रीय समस्या है और सब को मिल कर यह कोशिश करनी चाहिये कि एक सयुक्त मोर्चा बनाया जा सके।

प्रजा परिषद् के पिछले कार्यों की चर्चा करके अक्सर प्रस्तुत प्रश्नो की असलियत को छिपाने की कोशिश की जाती है। सुस्पष्ट कारणो से अच्छा यह होगा कि निश्चित मामलो पर उन की

असलियत को ध्यान मे रख कर विचार किया जाय। यदि एक बार भी हम ने एक दूसरे के इरादे पर संदेह करना शुरू कर दिया तो वातावरण और भी अधिक दूषित हो जायेगा। आप कृपया इस तथ्य की ओर से आंख न मूद ले कि काफी संख्या मे जम्मू के मुसलमानों ने भी इस आन्दोलन मे भाग लिया है। मेरा आप से हार्दिक अनुरोध है कि आप शेष भारत पर इस आन्दोलन के प्रभाव का विचार करे। जम्मू और काश्मीर राज्य भारतीय सघ का ही एक भाग है और इसलिये भारत के रहने वालो को पूरी आजादी है कि वे उस राज्य के मामलो मे दिलचस्पी लें। भारत ने इस विशेष राज्य के लिये काफी खतरे मोल लिये है, यद्यपि इस के लिये किसी के भी मन मे कोई पछतावा नही है। पर साथ ही साथ हम को यह सावधानी भी रखनी है कि भारत ने जो त्याग किया है उसका प्रभाव कही अधिकारियो द्वारा गलत नीति पर चलने से व्यर्थ न जाय।

हम इस बात के लिये चिन्तित है कि जम्मू और काश्मीर के भारत मे प्रवेश का प्रश्न अन्तिम और अपरिवर्तनीय रूप से हल हो जाय। अब भी यही माना जाता है कि यह बात जनमत सग्रह पर निर्भर है। सुरक्षा समिति की हाल की गतिविधियो को देखते हुए हमे इस बात का यथेष्ट संकेत मिलता है कि उस दिशा मे हमे किसी प्रकार के न्यायोचित व्यवहार की आशा न रखनी चाहिये। जनता की इच्छा को जानने के लिये किसी आम जनमत संग्रह का मार्ग ग्रहण करने की कोई जरूरत नही दिखाई देती। जम्मू और काश्मीर मे जिस विधान मण्डल का गठन हुआ है उस का निर्वाचन वयस्क मताधिकार के आधार पर हुआ है। यद्यपि कुछ चुनावो के बारे मे, विशेषत: जम्मू क्षेत्र के चुनावो के बारे मे, यह सदेह प्रगट किया गया है कि वे वैध नही है, फिर भी उक्त विधान मण्डल भारत मे राज्य के शामिल होने के विषय मे एक प्रस्ताव पास कर सकता है और इसे ही जनता की इच्छा जानने का यथेष्ट साधन मान लेना चाहिये। इस से उक्त राज्य के भारत मे अन्तिम रूप से शामिल होने के बारे मे सभी प्रकार की अनिश्चितता का अन्त हो जायेगा। शेख अब्दुल्ला से मुझे मालूम हुआ था कि वे और उन के सहयोगी इस पद्धति को स्वीकार करने के लिये तैयार थे, पर आप इस को मानने के लिये तैयार नही थे। शायद उस समय आप को यह उम्मीद थी कि सुरक्षा समिति के जरिये किसी प्रकार के सतोषजनक समझौते की सम्भावना है। अब जब कि वह सम्भावना खत्म हो चुकी है, हमे जितनी जल्द हो, वैकल्पिक मार्ग की घोषणा कर देनी चाहिये और देश को बाह्य और आन्तरिक कारणों से उठ खडी होने वाली पेचीदगियो से बचाना चाहिये।

प्रजा परिषद् ठीक ही यह सगत प्रश्न उठा रहा है- यदि उक्त राज्य के भारत मे अन्तिम रूप से शामिल होने का सवाल अनिश्चित ही बना रहता है और अगर निर्णय का आधार आम जनमत ही होगा, तो यदि जनता का बहुमत, जो कि मुस्लिम है, भारत मे शामिल होने के विरुद्ध होता है तब जम्मू का भविष्य क्या होगा? आप इस बात को ऊल जलूल कह कर ही न टाल दे। हम भारत के अग भग के अपने कटु अनुभव को भूल नही सकते, न हम उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रान्त की, जिसे खान अब्दुल गफ्फार खा और उन के सुयोग्य भाई का नेतृत्व प्राप्त हुआ था, दुखद दशा की ओर से आख मूद सकते है। एक ऐसा आम जनमत सग्रह जो एक बहुत अधिक पेचीदे सवाल पर लिया जा रहा हो, और जिसके दर्मियान साम्प्रदायिक उत्तेजना के आसानी मे भड़क उठने की सम्भावना हो, जनता की इच्छा को जानने का किसी भी प्रकार से सुरक्षित मापदण्ड नही है। यह स्वाभाविक ही है कि जम्मू के निवासी शरणार्थियो के रूप मे सब कुछ खो कर दर-दर भटकने

की सम्भावना को घृणा की दृष्टि से देखें । जनमत सग्रह हो या न हो, वे किसी भी हालत में भारत से सम्बन्ध-विच्छेद करने को तैयार नही । इस विवादग्रस्त मामले को अन्तिम रूप से सुलझाने में जितनी ही देरी होगी, उलझन और अशांति की सम्भावनाये उतनी ही बढ़ेगी ।

जब एक बार यह तय हो जाता है कि भारत मे प्रवेश के बारे में अन्तिम निर्णय किया जा चुका है, तो दो मामलो को हाथ मे लेना होगा । एक यह कि जम्मू और काश्मीर का जो प्रदेश इस समय पाकिस्तान के अधिकार में है, उसे वापस लिया जाय । यद्यपि यह सिद्ध किया जा चुका है कि पाकिस्तान आक्रमणकारी रहा है, फिर भी उपर्युक्त मामले मे हमे सुरक्षा समिति से कोई सहायता न मिलेगी। पाकिस्तान अपनी खुशी से उक्त प्रदेश पर अपने अधिकार का त्याग न करेगा । तब प्रश्न यह उठता है कि ऐसी दशा मे हम कैसे उस प्रदेश को वापस पायेगे ? आप ने हमेशा ही इस सवाल को नजर-अन्दाज करने की कोशिश की है । पर अब वह समय आ गया है कि हमे आप बतावे कि आप इस मामले मे ठीक ठीक क्या करने का विचार रखते है ? यदि हम उस प्रदेश को, जिसे हम ने खो दिया है, वापस नही कर पाते तो यह एक राष्ट्रीय कलंक और लज्जा से किसी कदर कम न होगा ।

दूसरा सवाल यह है कि किस हद तक जम्मू और काश्मीर राज्य भारत में शामिल हो ? निस्संदेह सविधान के अनुच्छेद ३७० के अनुसार प्रतिरक्षा, वैदेशिक मामले और संचार के अतिरिक्त अन्य मामलों में निर्णय जम्मू और काश्मीर की सरकार की पूर्व स्वीकृति से होगा । जैसा कि आप को स्मरण होगा, यह एक अस्थायी व्यवस्था है और श्री गोपालस्वामी अय्यंगार ने भी, जिन्होंने कि इस अनुच्छेद की स्वीकृति सम्बन्धी प्रस्ताव पेश किया था, यही बात साफ तौर पर कही थी । उन्हों ने यह भी कहा था कि सभी सम्बन्धित लोगों को यह आशा है और सब की यह इच्छा है कि जम्मू और काश्मीर अततोगत्वा उसी प्रकार भारत मे शामिल हो जायेगा जिस प्रकार अन्य देशी राज्य शामिल हो गए है । अत. यदि जम्मू निवासी यह माग करते है कि प्रवेश उसी ढग से होना चाहिये जैसे अन्य रियासतो के मामले मे हुआ है, तो उन का यह कथन किसी भी प्रकार से अनुचित या असाधारण नही है । यह उन की स्वाभाविक इच्छा है और वे देशभक्ति तथा राष्ट्रीयता की भावना से प्रेरित है । वे स्वाधीन और संयुक्त भारत के एक ठोस ढांचे को कायम रखने की आवश्यकता पर ही बल देते है ।

शेख अब्दुल्ला और उन के कुछ सहयोगी विधान परिषद् के, जिस ने कि भारत का सविधान बनाया था, सदस्य रहे थे । अगर वे यह दावा करते है कि जम्मू और काश्मीर राज्य के साथ विशेष बर्ताव होना चाहिये और उसके प्रवेश का स्वरूप लचीला होना चाहिये, तो इस की जवाबदेही उन्ही पर है, न कि अन्य उन लोगों पर जो उन से भिन्न राय रखते है । एक निर्वाचित सदर और पृथक झडे की व्यवस्था को उन लोगो के दृष्टिकोण से देखना होगा जो ईमानदारी के साथ यह अनुभव करते है कि इस प्रकार भारत की राजनैतिक एकता, जिसे हर तरह से कायम रखना प्रत्येक राज्य और प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य है, नष्ट हो जायेगी । अगर दूसरे राज्य भी इसी प्रकार की मागे पेश करने लगे तो इस से पृथक्करण की खतरनाक प्रवृत्तियो को बढावा मिलेगा इस के अतिरिक्त आपके द्वारा गत जुलाई मे घोषित नागरिकता के अधिकारो, बुनियादी अधिकारों, सर्वोच्च न्यायालय, राष्ट्रपति के संकटकालीन अधिकारो आदि के विषय मे सर्व-स्वीकृत प्रस्तावो को कार्यान्वित करने में देरी होने से जनता के मन मे बड़ा संदेह पैदा हो गया है ।

जम्मू निवासी आज जिस बुनियादी सवाल को उठा रहे हैं, अर्थात् क्या उन्हें यह मांग करने का जन्मजात अधिकार नही हैं कि वे उसी संविधान द्वारा शासित हो जो शेष भारत को प्राप्त हुआ है— उस का जवाब दमन न होना चाहिये। अगर काश्मीर घाटी के लोग किसी और ढंग के विचार रखते हों तो भारत में पूर्ण प्रवेश के प्रति इस प्रकार की अनिच्छा का नतीजा क्या जम्मू को भी भुगतना होगा ? "एक निशान, एक विधान, एक प्रधान"—यह गहरी देशभक्ति और भावना से युक्त नारा है, जिस लेकर जनता अपना संघर्ष चला रही है। आप या शेख अब्दुल्ला इस प्रश्न को केवल जेलखानो या गोलियो के द्वारा नही सुलझा सकेगे। इसे कैसे सुलझाया जाय, यह पारस्परिक वार्ता और राजनीतिज्ञता का विषय है।

जम्मू और काश्मीर राज्य के विभिन्न भागो की अलग-अलग विशेषताओ से आप से अधिक और कोई परिचित नही है। काश्मीर घाटी, जम्मू और लद्दाख के निवासी विभिन्न प्रकार के लोग हैं। उन की भाषा, उन के दृष्टिकोण, ये सभी एक दूसरे से बहुत भिन्न हैं। ऐतिहासिक और राजनैतिक दृष्टि से वे एक सगठित इकाई बन गये जिसे हम स्वभावत: छिन्न भिन्न या विनष्ट न करना चाहेगे। ऐसे लोगों को एकता के बधन में स्वाभाविक रूप से और मजबूती के साथ बांधे रखना बल प्रयोग या ज़ोर ज़बरदस्ती से सम्भव न होगा। यह कार्य तो सदिच्छा और विश्वास के मित्रता-पूर्ण वातावरण को तैयार करने से ही हो सकेगा। यह एक बड़ी मनोवैज्ञानिक समस्या भी है और इसे सावधानी और सहृदयता के साथ हल करना होगा। यदि आप ने ठीक ढंग से कार्य किया होता और राज्य के भविष्य से सम्बन्धित कतिपय महत्वपूर्ण मामलों के बारे मे जो लोग आप से अलग राय रखते हैं उनको समझने में आप को ग़लत फहमी न हुई होती, तो इस विषय पें आप और शेख अब्दुल्ला काफ़ी कुछ कर सकते थे।

जैसा कि आप जानते है, कई हज़ार ऐसे लोग अब भारत मे शरणार्थी बन कर रह रहे है जो पहले राज्य के पाकिस्तान अधिकृत इलाके मे रहते थे। उन मे से अधिकाश जम्मू के लोग है। किसी न किसी तरह का बहाना कर के उन्हे राज्य की सीमा के अन्दर ठीक से फिर से बसाया नही जा सका है और वे अपने दिन बुरी दशा मे गुज़ार रहे हैं। उन्हें कानूनी आधार पर श्रीनगर के स्टेट बेंक से अपना जमा रुपया भी नहीं निकालने दिया गया है। इस के अलावा, इस इलाके से चार हज़ार से अधिक हिन्दू और सिख स्त्रियो को पाकिस्तानी हमलावरो द्वारा भगाया गया। इन को वापस लाने के लिये कुछ भी नही किया गया है। शेख अब्दुल्ला और उन के साथियो द्वारा डोगरो पर लगातार दुर्वचनो का प्रहार किया गया जिस से अविश्वास और कटुता का वातावरण उत्पन्न हो गया। राज्य में भूमि सम्बन्धी कानूनो मे बहुत अधिक परिवर्तन किये गये हैं और वे निस्सदेह बडे महत्व के है। लेकिन किसी ने भी यह जानने की परवाह न की कि जम्मू के अपेक्षाकृत और भी अधिक ग़रीब निवासियो पर, जिन की आर्थिक अवस्था अब बहुत ही कठिन हो गई है, उन कानूनो की क्या प्रतिक्रिया होगी? यदि हम इस समस्या का शान्तिपूर्ण हल खोजना चाहते है तो ये और ऐसी ही बाते ध्यान में रखनी होंगी।

मैंने इस पत्र में अब्दुल्ला सरकार की शासन और भेदभाव की नीति के सम्बन्ध में अन्य गम्भीर आरोपों की चर्चा नहीं की है। इन मामलों पर किसी निष्पक्ष अधिकारी द्वारा उन तथ्यों और आंकड़ों के आधार पर विचार किया जा सकता जो आप को या शेख अब्दुल्ला को दिए जा सकते हैं।

जो लोग खुशी से त्याग और कष्ट सहन कर रहे हैं वे भारत या जम्मू और काश्मीर के दुश्मन नहीं हैं। पाकिस्तान भली-भांति जानता है कि यदि उन की बात मान ली जायगी तो जम्मू और काश्मीर को हड़पने की कोई भी सम्भावना उसके लिये शेष न रहेगी। मैं आप से हृदय से यह अनुरोध करूंगा कि आप शेख अब्दुल्ला से विचार-विमर्श करें और पहले कदम के रूप में उन सब को कारा-मुक्त कर दें जिन्हें गिरफ्तार किया गया है और उन के विरुद्ध की गई कानूनी कार्रवाई को वापस ले लें। इस के बाद ही एक सम्मेलन होना चाहिये जिस में झगड़े वाले मामलों पर विचार होना चाहिये और ऐसा हल ढूढ निकालना चाहिये जो समग्र भारत के भी हित में हो और जम्मू और काश्मीर की जनता के अधिकारों और हितों के भी अनुकूल हो। आप से प्रार्थना है कि आप मिथ्या प्रतिष्ठा को ले कर न अड़े रहें या ब्रिटिश शासकों के तरीको को, जो यह सोचते थे कि जनता के अधिकारों और आज़ादी से सम्बन्धित मामलों को निर्दय दमन द्वारा निपटाया जा सकता है, न अपनायें। आप ने झगड़ो का निपटारा करने के लिये गांधीवादी तरीकों को अपनाने के बारे में काफ़ी ज़ोर दिया है। मेरी आप से अपील है कि आप उन तरीकों को इस कठिनाई के हल के लिये भी प्रयोग में लायें क्योंकि इस का प्रभाव न केवल जम्मू और काश्मीर पर, बल्कि समस्त भारत पर गम्भीर रूप से पड़ सकता है। यह आन्दोलन फैल रहा है। और अगर अधिकारियों ने केवल दमन का ही प्रयोग करना बुद्धिमत्तापूर्ण समझा तो यह और अधिक बढ़ेगा तथा भारत के विभिन्न भागों में भी शुरू हो जायेगा।

मैं जानता हूं कि आप ने हम लोगों को बुरा-भला कहा है, हमारी खिल्ली उड़ाई है और आप को हमारी आलोचनाओ मे कोई भी अच्छी बात नहीं दिखाई दी है। यद्यपि मैंने इस मामले में आप से बहुत अधिक भिन्न राय रखी है, फिर भी मैंने आपके दृष्टिकोण, आप के भय और आप की आशाओं को समझने की कोशिश की है। और इसी दृष्टि से मैं ने यह पत्र आप को लिखा है और आप से आग्रह किया है कि अपने विरोधियो के दृष्टिकोण का भी आदर करें और जिस ढंग से आप आज कल कार्य कर रहे हैं उस से भिन्न ढंग अपनावें। मुझे आशा और विश्वास है कि मेरी अपील व्यर्थ न जायेगी और जम्मू में जो गम्भीर परिस्थिति दिनोदिन उत्पन्न होती जा रही है उसके समाधान के लिए आप तत्काल कदम उठायेंगे।

मैंने आप को यह पत्र प्रजा परिषद् के अनुरोध पर नही लिखा है। मुझे पूरी आशा है कि यदि आप परिषद् की बुनियादी मांगों को समझ कर ढंग से उन के प्रति व्यवहार करें तो एक सम्मानपूर्ण समझौते पर पहुंचा जा सकेगा।

मैं इस पत्र की प्रतिलिपि शेख अब्दुल्ला के पास भी भेज रहा हूं। यदि आप चाहते हैं कि मैं आप से और शेख अब्दुल्ला से व्यक्तिगत रूप से मिल कर बातें करूं, तो आप मुझे बतावे और मैं प्रसन्नतापूर्वक आप की इच्छानुसार वैसा करूंगा।

आपका शुभेच्छु,
(ह०) श्यामाप्रसाद मुकर्जी

श्री जवाहरलाल नेहरू,
भारत के प्रधान मंत्री,
नई दिल्ली

श्री नेहरू का उत्तर

नई दिल्ली,
२० जनवरी, १९५३

प्रिय श्यामाप्रसाद,

आपका ९ जनवरी का पत्र मुझे आज मिला। मैं तुरन्त ही इसका जवाब दे रहा हूं क्योंकि मैं जल्दी ही दिल्ली से हैदराबाद जा रहा हूं।

जम्मू की स्थिति को हल करने के बारे में कोशिशें करने से हमारी प्रतिष्ठा को धक्का लगने का कोई सवाल ही नहीं उठता। यदि कोई रास्ता सही दिखाई देगा तो हम अवश्य ही उस पर चलेंगे। आप कहते हैं कि जम्मू में दमन का दौर है और प्रजा परिषद् या उसके समर्थकों की ओर से हिंसा की कोई कार्रवाई नहीं हुई। पर यह बात सच है कि प्रजा परिषद् के लोगों ने बड़े पैमाने पर हिंसा की कार्रवाई की है। और इसके लिये कोई प्रमाण देने की जरूरत नहीं है। बहुत से अधिकारी और पुलिस के सिपाही घायल हो गये हैं और सरकारी इमारतों को नष्ट भ्रष्ट किया गया है। ये बातें इसका पर्याप्त प्रमाण हैं कि वहां हिंसा की कार्रवाइयां हुई हैं।

अवश्य ही मैं इस बारे में दिलचस्पी रखता हूं कि जम्मू में क्या हो रहा है। मैंने इन घटनाओं का बड़े ध्यान के साथ अध्ययन किया है। मुझे सिर्फ तथा-कथित सरकारी रिपोर्टों से ही नहीं, बल्कि गैर सरकारी सूत्रों से भी सूचना मिलती रहती है। ये सभी इस बात पर एकमत हैं कि जम्मू और काश्मीर सरकार ने दमन की कार्रवाइयां न करने की कोशिश की, और परिस्थितियों को देखते हुए उसने काफी संयम से काम लिया। इस मामले में उचित हुआ या अनुचित, इस बात को अलग रखिये, मैं चाहता हूं कि आप यह समझ कर चलिये कि किसी सरकार का संचालन आप कर रहे हैं और उसे इस तरह के आन्दोलन का सामना करना पड़ रहा है जिसमें हिंसा से काम लिया जा रहा हो। ऐसी स्थिति में या तो सरकार हट जाय या फिर स्थिति पर काबू पाये, बीच का कोई रास्ता नहीं है। यह सच है कि स्थिति पर काबू पाने के लिये अधिकारियों द्वारा कुछ ज्यादतियां हो सकती हैं। लेकिन, जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं, मेरी सूचना इसके विरुद्ध जाती है। यह ठीक है कि मैं हर बात की बारीकी में नहीं जा सकता। आपका कथन है कि मुझ से भेंट करने की अनुमति मांगी गई और नहीं मिली। मुझे इस बात का कोई ज्ञान नहीं है कि पिछले कुछ महीनों में मुझ से भेंट करने की अनुमति मांगी गई। सिर्फ अखबारों में मैंने देखा कि धमकियां दी गई हैं।

मुझे विश्वास है कि मैं खुले दिल से विचार कर सकता हूं। कम से कम मैं ऐसा करने की कोशिश जरूर करता हूं और मैं किसी भी सुझाव पर विचार करने को तैयार हूं। और मामलों

से कहीं अधिक इस मामले की प्रत्येक घटना पर मुझे बड़ा सोच विचार करना होगा। जम्मू में जो कुछ होता है, वह स्थानीय मामला नही है। समस्त काश्मीर समस्या; जम्मू और काश्मीर राज्य का भविष्य; पाकिस्तान और संयुक्त राष्ट्र संघ आदि पर उसका भारी प्रभाव पड़ता है। इस प्रश्न पर इस व्यापक दृष्टिकोण से विचार करना है। मुझे आश्चर्य होता है कि जम्मू आन्दोलन का समर्थन करने वाले लोग इस दृष्टिकोण को भूल जाते है या उसकी उपेक्षा करते हैं या उसे कोई महत्व नही देते। मुझे तो यह बिल्कुल साफ दिखाई देता है कि यदि जम्मू आन्दोलन सफल हो गया, तो काश्मीर के बारे मे हमारा सारा मामला ही चौपट हो जायगा। यह सच है कि इस आन्दोलन से प्रजा-परिषद् द्वारा घोषित उद्देश्यो को सब से अधिक हानि पहुंचेगी। यह सोचने मे मैं असमर्थ हूं कि वे इस तरह से किस प्रकार अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने की आशा करते हैं। आपको काश्मीर की सारी समस्या की पृष्ठ भूमि का कुछ ज्ञान तो है ही, और मैं चाहता हूं कि आप इस सारे सवाल पर विचार करें।

मान लीजिये कि काश्मीर घाटी मे मुस्लिम लीग के कुछ बचे-खुचे लोग ऐसा आन्दोलन शुरू करे जो भारत-विरोधी और पाकिस्तान समर्थक हो। हम इसका किस तरह सामना करेंगे? आपके विचार मे प्रजा परिषद् के आन्दोलन से घाटी और दूसरी जगहों पर रहने वाले ऐसे लोगों पर क्या असर पडेगा? यदि आप भानमती का पिटारा खोलेंगे तो सभी प्रकार की अप्रत्याशित अनुचित चीजे बाहर निकल आयेंगी। दोनों मामलो में एक जैसी नीति पर चलना होगा।

आपने भारत सरकार और जम्मू और काश्मीर राज्य सरकार के बीच कुछ महीने पहले हुए समझौते की चर्चा की है; और उसकी आलोचना की है। हमने उस समय इस मामले पर पूरी तरह विचार किया था और मैंने इसके कारण भी बताने की कोशिश की थी। यह स्पष्ट है कि जम्मू और काश्मीर राज्य के मामले पर बिल्कुल उसी दृष्टिकोण से विचार नहीं किया जा सकता जिस दृष्टिकोण से दूसरे राज्यो के साथ किया गया। इसके लिये कोई दलील की जरूरत नही है। प्रश्न हमारी इच्छा या चाह का नही है; प्रश्न तो तथ्यों और पेचीदा तथ्यों का है। इन सभी तथ्यो पर विचार करने के बाद हम एक निश्चित निर्णय पर पहुंचे थे जो मेरे विचार मे उचित था और जिससे काश्मीर का भारत से सम्बन्ध और मजबूत हो गया। इस राज्य की समस्या का हल अन्त मे किसी वैधानिक निर्णय या संविधान मे परिवर्तन करने से नही होगा। वैधानिक मामलो से बढ़-चढ़ कर दूसरी बातें, जिनमें अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के मामले भी शामिल है—अपना प्रभाव डाल रही है। वैदेशिक नीति हमारी इच्छाओं और प्रवृत्तियो का प्रतिबिम्ब मात्र नही है। इस का समन्वय परिस्थितियों राष्ट्रीय आकांक्षाओं एवं बल से होना चाहिये।

आपने इसकी चर्चा की है कि शेख अब्दुल्ला ने आप से कहा है कि वह और उनके साथी अपनी संविधान सभा में राज्य के भारत में प्रवेश के बारे मे एक प्रस्ताव पास कराने को तैयार थे, लेकिन मैंने उसे स्वीकृति नही दी। यह आंशिक रूप से सही है, लेकिन यह एक खास समय की बात है। जब भारतीय विधान परिषद् ने सर्वप्रथम कार्रवाई शुरु की थी, उस

समय इस प्रस्ताव पर विचार किया गया था। उस समय हमने यह सलाह दी थी कि तुरन्त ही ऐसा प्रस्ताव पास करना बुद्धिमानी नही होगी, क्योकि इससे यह निष्कर्ष निकाला जायगा कि विधान परिषद् दूसरे कामो के लिये नहीं, बल्कि इसी काम के लिये बुलाई गई थी। हमारी समझ मे काश्मीर भारत मे पूरी तरह शामिल हो चुका है और विधान परिषद् का प्रस्ताव उसे अधिक पूर्ण नही बना सकता था—यद्यपि उसका स्वागत किया जाता। प्रश्न यह नहीं था कि प्रवेश को और व्यापक बनाया जाय। प्रश्न तो यह था कि संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रति हमारा दृष्टिकोण क्या हो। हमने यह स्पष्ट कर दिया था और हमने जो कुछ कहा था, उस पर हम अडे रहना चाहते थे। वह एक व्यापक प्रश्न है। विधान परिषद् को ऐसा प्रस्ताव पास करने का पूरा अधिकार था। वास्तव में भारत सरकार और जम्मू और काश्मीर सरकार के बीच कुछ महीने पहले जो समझौता हुआ था, वह प्रकट रूप से न सिर्फ इस प्रवेश की पुष्टि ही थी, बल्कि उसे कार्यान्वित करना भी था।

आपने लिखा है कि इस समझौते को कार्यान्वित नही किया गया है। यह सच है। लेकिन रास्ते में कुछ कठिनाइयां आईं जिनके कारण विलम्ब हुआ। पहले ही जिस प्रश्न पर विचार शुरू किया गया, उसका निर्णय करने में कई महीने लगे। इसमें कोई सदेह नहीं है कि दूसरे मामलों पर विचार किया जायगा।

यह प्रश्न उठता ही नही, कि जम्मू और काश्मीर का 'सदरे रियासत' किसी भी प्रकार राष्ट्रपति का प्रतिद्वंद्वी होगा। वह भारत के दूसरे राज्यो के राजप्रमुखो के समान ही राज्य का प्रमुख होगा। उसकी नियुक्ति भारत के राष्ट्रपति की स्वीकृति के बाद ही होगी।

हम, और मेरा विश्वास है कि शेख अब्दुल्ला भी, जम्मू के लोगो की शिकायतो पर विचार करने, और जहां तक संभव होगा उन्हें दूर करने के लिये तैयार है। लेकिन, प्रजा परिषद् की मांगो का मूल वैधानिक मामलों से संबंध है जिन्हे विशेष कारणो से स्वीकार नहीं किया जा सकता। वे एक बहुत कठिन और जटिल वैधानिक प्रश्न का फैसला युद्ध के तरीकों से करने की कोशिश कर रहे है। यह जानने के लिये बहुत सोच विचार करने की कोई जरूरत नहीं है कि इन तरीको से वे परिणाम नही निकल सकते, चाहे उनका कितना ही औचित्य क्यों न हो। इससे केवल जम्मू और काश्मीर राज्य के समूचे हित को, और विशेषकर उस मांग को हानि ही पहुंचेगी जो जम्मू के कुछ लोग शायद चाहते है। आप अलगाव की बात करते हैं। मै इस संबंध में आपसे पूर्ण सहमत हूं कि हमें इस प्रवृत्ति को बढ़ावा नहीं देना चाहिये। लेकिन, प्रजा परिषद् के आन्दोलन से ठीक ऐसा ही हो रहा है।

आपको मालूम है कि मै जम्मू और काश्मीर की समस्या को अन्तिम रूप से हल करने के बारे में कितना चिंतित हूं। यह केवल काश्मीर के हित के लिए ही नहीं, बल्कि इसलिए भी कि भारत पर इस का बहुत असर पडेगा। लेकिन यह मसला बहुत ही जटिल बन गया है और संसदीय कार्यवाई द्वारा इस समस्या को हल नहीं किया जा सकता, जैसा कि कुछ लोग समझते है। विश्व में आज कई समस्यायें है जो बड़े-बड़े राष्ट्रों की इच्छा के

बावजूद हल नहीं हो सकी है। हमें इन सभी बातो पर विचार करना है और अपनी भावनाओं के प्रवाह में नहीं बह जाना है।

आपने विस्थापितों के पुनर्वास और भगाई गई महिलाओं की चर्चा की है। पिछले कुछ वर्षों से हम बराबर इन मामलों को हल करने की कोशिश करते रहे है। बहुत सी भगाई गई महिलाओं को वापस लाया जा चुका है और भारत से बहुत से विस्थापितों को पुनर्वास के लिये वापस भेज दिया गया है और राज्य में बसा दिया गया है। यह कहना सच नही है कि इस सम्बन्ध में कुछ भी नही किया जा सका है।

जम्मू के सवाल को हल करने का सही तरीका यह है कि इस आन्दोलन को पूर्ण रूप से बन्द कर दिया जाय और फिर जो भी शिकायते हों उन पर बात की जाये। मुझे आशा है कि इस सम्बन्ध मे प्रजा परिषद् पर आप अपना प्रभाव डालेगे।

यदि आप चाहे तो मै आपसे खुशी से मिलूगा। लेकिन मै बम्बई और हैदराबाद जा रहा हूं और कोई दस दिन बाहर रहूंगा। मुझे पता चला है कि शेख अब्दुल्ला भी हैदराबाद जा रहे है।

आपका शुभेच्छु,
(ह०) जवाहरलाल नेहरू

डाक्टर श्यामाप्रसाद मुकर्जी
संसद-सदस्य
३० तुगलक क्रेसेंट,
नई दिल्ली

डाक्टर मुकर्जी का पत्र

७७ आशुतोष मुकर्जी रोड,
कलकत्ता २५,
३ फरवरी, १९५३

प्रिय जवाहरलाल जी,

काश्मीर की स्थिति के बारे में मैंने आपको जो पत्र लिखा था, उसके उत्तर में आपका पत्र मिल गया। इसके उपरान्त मैं आपके और शेख अब्दुल्ला के भाषण पढ़ता रहा हूं। इस मामले पर आपसे लम्बी-चौड़ी लिखा-पढ़ी करने का मेरा कोई विचार नहीं है। लेकिन इस समस्या में जो बातें निहित हैं, वे इतनी गंभीर है कि मैं आपको फिर लिखने का साहस कर रहा हूं। इन सभी भाषणों की एक समानता यह रही है कि आपने उन लोगों को बहुत बुरा-भला कहा है जो आपसे मत-भेद रखते है। आपने हम सब पर निकृष्ट उद्देश्यों से प्रेरित होने का आरोप लगाया है और यहां तक कहा है कि हम देश के हित के प्रति विश्वासघाती है। इस सम्बन्ध में मैं आपका अनुसरण नही करना चाहता। क्रोध और उत्तेजना के तीव्र प्रदर्शनों से हमें किसी बड़ी समस्या को हल करने में सहायता नही मिलेगी। यह स्पष्ट है कि इस महत्वपूर्ण मसले पर मेरे और आप के विचार भिन्न है लेकिन हमें एक दूसरे को समझाने बुझाने की कोशिश करनी चाहिये और तर्क-वितर्क करके आगे बढना चाहिए और देखना चाहिए कि कोई हल निकल सकता है या नही।'

मैंने काफी सावधानी से आपका पत्र और आपके और शेख अब्दुल्ला के भाषण पढ़े। लेकिन दुर्भाग्य की बात है कि उनमें वास्तविक समस्याओं के बारे में कुछ भी नहीं कहा गया है।

सबसे पहले मैं आपके द्वारा हमारे विरुद्ध अक्सर दुहराये गये साम्प्रदायिकता और संकीर्णता के आरोप का जवाब दूंगा। यह एक दम गलत आरोप है और आप अनजाने में सिर्फ अपने दृष्टिकोण की कमजोरी को छिपाने के लिये हाल में ही इस तरह के आरोप लगाते रहे हैं। इस समस्या को हल करने की दिशा में हम राष्ट्रीय और देशभक्ति की सर्वोच्च भावनाओं से प्रेरित हुए हैं। हम जो हल बता रहे हैं वह साम्प्रदायिकता से बहुत दूर है। उसका उद्देश्य भारत को छिन्न-भिन्न करना भी नहीं है। मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप ठंडे दिल से इस बात पर विचार करें कि अपने जीवन में आप भारत में मुसलिम फिरका-परस्ती का सामना करने में असफल रहे जिसके फलस्वरूप भीषण परिणाम हुए। शायद आपने और अन्य लोगों ने खुश करने और रियायतें देने की जिस नीति पर अमल किया उसके पीछे अत्युच्च उद्देश्य थे। लेकिन, अन्त में देश का विभाजन हुआ जबकि आप स्वंय इसके विरुद्ध बराबर घोषणा किया करते थे। उस समय एक बहुत महत्वपूर्ण बात जो हमारे विरुद्ध जाती

थी , वह यह थी कि विदेशी सत्ता यहां मौजूद थी जो "फूट डालो और शासन करो" की नीति पर चलना चाहती थी । यदि आज हम सतर्क रहना और पिछली दुखद गलतियों से बचना चाहते हैं तो ऐसा हम देश के सर्वोच्च हित मे कर रहे है, न कि किसी संकीर्ण साम्प्रदायिक उद्देश्य की प्राप्ति या किसी वर्ग के हित के लिए ।

काश्मीर के बारे मे आपको जो समस्यायें हल करनी है वे निम्नलिखित है :—

१. प्रजा परिषद को बहुत से लोगो का समर्थन प्राप्त है । चूकि आप जानते है कि जन साधारण का दिमाग कैसे काम करता है, आप यह अनुभव करेंगे कि किसी भी लोकप्रिय आन्दोलन को ताकत से कुचला नही जा सकता । हो सकता है कि आप प्रजा परिषद की मांगों को उचित न समझें । फिर भी आपको चाहिये कि आप अपने को आन्दोलन को बढावा देने वालो और समर्थको की स्थिति में रखे और उनके दृष्टिकोण को समझने की कोशिश करें । आप और शेख अब्दुल्ला दोनों ने ही प्रजा परिषद के तथाकथित इतिहास की लम्बी चर्चा की हैं । इस सम्बन्ध में आपसे वाद-विवाद करने का मेरा कोई इरादा नही है । लेकिन, आपने जो कुछ भी कहा है उसमें बहुत सी बातें तथ्यों पर आधारित नहीं है । इस समय इस प्रकार की जांच वास्तव में निरर्थक है । निर्णय तो प्रजा परिषद द्वारा उठाये गये सवालों के औचित्य के बारे में करना है ।

२ पहला प्रश्न यह है कि जम्मू और काश्मीर के भारत में प्रवेश करने का मामला अन्तिम रूप से कब और कैसे निपटाया जायगा ? यदि यह जनमत सग्रह पर निर्भर है तो इस जनमत-संग्रह का स्वरूप क्या होगा ? हम नही चाहते कि यह संयुक्त राष्ट्र संघ के हस्तेक्षप पर या पाकिस्तान के साथ समझौते की बातचीत पर निर्भर रहे । हम प्रवेश के सवाल को लेकर संयुक्त राष्ट्र सघ में नही गये थे ; हम तो इसलिये वहां गये थे कि भारत को, जिसमें हमारे दावे के अनुसार जम्मू और काश्मीर राज्य भी शामिल है, पाकिस्तान द्वारा किए गये हमले से बचाया जा सके । सयुक्त राष्ट्र सघ से किसी न्यायपूर्ण समझौते की कोई आशा नही है । इसमें कोई सदेह नही कि आपने बार बार यह कहा है कि प्रवेश की समस्या, जम्मू और काश्मीर की जनता की इच्छा के अनुसार हल की जायेगी । हमारी सीधी-साधी मांग यह है कि यह इच्छा अब हमेशा के लिए जान ली जाय और उसे अनिश्चित भविष्य पर न छोडा जाय । मेरा खुद का सुझाव यह रहा है कि जम्मू और काश्मीर की विधान सभा, जो वयस्क मताधिकार के आधार पर चुनी गई है, एक प्रस्ताव पास करे जिसमे अन्तिम रूप से यह मान लिया जाय कि राज्य का भारत मे प्रवेश हो चुका है और जहां तक भारत का सम्बन्ध है, यह समझ

लेना चाहिए कि यह मामला तय हो चुका है। आपके व्यक्तिगत एलान और शेख अब्दुल्ला के भाषण काफी नहीं है। इस मामले को तय करने का वैधानिक तरीका होना चाहिये। आप और शेख अब्दुल्ला इस सुझाव को क्यो नहीं मानते और प्रजा परिषद द्वारा उठायी गई एक मुख्य बात को तय क्यों नही करते ? कृपया इस बारे में अपनी निश्चित राय से हमें अवगत कराइये और बताइये कि यदि यह सुझाव अमान्य है तो प्रवेश के से सवाल को अंतिम रूप तय करने के वास्ते आपका क्या सुझाव है ?

३. दूसरा सवाल जम्मू और काश्मीर के उस एक-तिहाई भाग से सम्बन्ध रखता है जो इस समय पाकिस्तान के कब्जे मे है। आपने उन लोगो के विरुद्ध बडी जोरदार भाषा मे अपने विचार व्यक्त किये है जो जम्मू और काश्मीर का विभाजन चाहते है। हम विभाजन नही चाहते और आपके आरोप काल्पनिक है। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि आप यह भूल गये है कि जम्मू और काश्मीर का पाकिस्तान द्वारा विभाजन किया जा चुका है और वास्तव मे प्रश्न यह है कि क्या आप और शेख अब्दुल्ला इस विभाजन को स्वीकार करना चाहते है ? आपने सदा इस प्रश्न को टाला है। कृपया इसे आप टालिए नही ; और भारत की जनता को यह बताइये कि यदि हमें इस प्यारी भूमि का वह भाग वापस मिलना है तो वह कब और कैसे वापस मिलेगा ?

४. तीसरा प्रश्न यह है कि किन किन विषयो के सम्बन्ध मे प्रवेश होगा ? प्रजा परिषद चाहती है कि जम्मू और काश्मीर राज्य पर वही सविधान लागू हो जो भारत के शेष भाग मे लागू है। हम इसे हृदय से स्वीकार करते है। क्या यह मांग लेशमात्र भी सांप्रदायिक या प्रतिक्रिया-वादी या राष्ट्र-विरोधी है ? यदि भारत का संविधान भारत के अन्य भागों के लिए अच्छा है तो वह जम्मू और काश्मीर राज्य के लिए मान्य क्यो नहीं है ? शेख अब्दुल्ला को यह प्रत्युत्तर देने की आदत पड गई है कि संविधान के ३७०वें अनुच्छेद के अनुसार जम्मू और काश्मीर को विशेष दर्जा मिला है। आप और हम इस अनुच्छेद का इतिहास अच्छी तरह जानते है। मान लिया कि प्रतिरक्षा, विदेशी मामले और संचार संबधी विषयो को छोड बाकी विषयो के बारे मे प्रवेश जम्मू और काश्मीर सरकार की मर्जी से होगा। फिर हम इस सरकार को समझा-बुझा कर वह सविधान क्यो स्वीकार नही करा सकते जिसके निर्माण मे शेख अब्दुल्ला और उनके साथियो ने भारतीय विधान परिषद के सदस्यों के रूप में भाग लिया था ? अगर यह अनुभव किया जाता है कि जम्मू और काश्मीर राज्य की विशेष जरूरतों को पूरा करने के लिये कई मामलो पर हमारे संविधान मे संशोधन करने की ज़रूरत है, तो हमारे सामने इसका पूरा चित्र होना चाहिए और यह

मालूम होना चाहिये कि वे कौन सी धाराएं हैं जिनमें संशोधन करने की जरूरत है ? हम खुले दिल से इस विषय पर बात चीत करने को तैयार हैं। लेकिन कुछ ऐसे बुनियादी मामले हैं जिनके बारे में देश की एकता हर कीमत पर बनाये रखना चाहिये। इनका संबंध मूल अधिकारों, नागरिक अधिकारों, सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार-क्षेत्र, हाईकोर्ट के कार्यों और उस की रचना, राष्ट्रपति के अधिकारो, राष्ट्रीय योजना निर्माण और वित्तीय संगठन से है। भारत सरकार और शेख अब्दुल्ला की सरकार के बीच गत जुलाई में यह समझौता हुआ था कि इनमें से कुछ मामलों के बारे में हमारे संविधान की व्यवस्थाओं को कार्यान्वित किया जायगा। इस संबंध में जो उलट-फेर हुई है. उस से हम संतुष्ट नही हैं। लेकिन इस प्रकार संविधान की संशोधित प्रयुक्ति में भी अनुचित और अनावश्यक रूप से विलम्ब किया गया जिससे कि लोगों के दिलों में संदेह और गलतफहमियां पैदा हो गई। राज्य के प्रमुख की स्थिति और समस्त भारत के लिये एक ही ध्वज का स्वीकार किया जाना भी भारत की एकता के आवश्यक अंग हैं। यह आश्चर्य की बात है कि आप एक ओर तो शेख अब्दुल्ला और उनके साथियों के पृथक्त्व आन्दोलन को राष्ट्रीय और देशानुरागी आन्दोलन कहकर उसकी सराहना कर रहे है और दूसरी ओर भारत 'की मूल एकता और अखंडता स्थापित करने और भारतीय नागरिको के रूप में शासित होने की प्रजा परिषद की सच्ची अभिलाषा को देश-विरोधी कार्रवाई कह कर उसकी निन्दा कर रहे हैं। आपके पत्र और आपके भाषणों मे प्रजा परिषद के इन बुनियादी सवालों का कोई संतोषजनक उत्तर नहीं दिया गया है।

५. जम्मू के लोगो को आर्थिक विकास, रोज़ी-रोज़गार, विस्थापितों के पुनर्वास और सांप्रदायिकता के आधार पर सीमावर्ती जिलों के विभाजन जैसे मामलों के बारे मे बहुत सी शिकायतें है जिनकी तुरन्त ही निष्पक्ष कमीशन द्वारा जाच कराने की ज़रूरत है। इन मामलो को निपटाने में विलम्ब करने से आन्दोलन उत्तरोत्तर गहरा हो रहा है।

६. यह निस्सन्देह सत्य है कि हमें एसी कोई बात नही करनी चाहिये जिससे भारत का मामला कमज़ोर पड जाय और दुश्मन के हाथ मजबूत हो जाय। इस पहलू पर विशेषकर आपको भारत के प्रधान मंत्री की हैसियत से ध्यान देना है। आपकी गलत नीति और आपसे भिन्न विचार रखने वाले लोगों की विचारधारा को न समझ सकने के कारण देश को महान् विपत्ति के किनारे तक पहुंचाया जा रहा है।

मैंने आपको इसी एक इच्छा से पत्र लिखा है कि क्या जम्मू के आन्दोलन को खत्म करने के लिये अब भी कोई रास्ता निकल सकता है ? इसका एक ही रास्ता है और वह यह है कि

सभी गिरफ्तार लोगों को रिहा कर दिया जाय और एक सम्मेलन बुलाया जाय जिसमें शान्ति से सभी समस्याओं पर विचार किया जाय और जिसका उद्देश्य सिर्फ यह हो कि कुछ ऐसे फैसले किये जायें जो सभी सम्बंधित लोगों के लिये न्यायपूर्ण और उचित हों। इस आन्दोलन को दमन, गिरफतारी लाठी-चार्ज और गोलियां चला कर कुचला नहीं जा सकता। वास्तव में यह बढेगा, गहरा बनेगा और भारत पर भी उसका असर पड़ेगा। हाल में ही कुछ प्रमुख लोग यह देखने के लिये जम्मू जाना चाहते थे कि वहां क्या हो रहा है और आपकी सरकार ने उन्हें उस राज्य मे जाने के लिये इजाज़त न देना उचित समझा। इस पर भी आप यह दावा करते हैं कि यह भारत सघ का भाग है और शेख अब्दुल्ला कहते हैं कि छिपाने की कोई बात नही है।

जनसंघ की कार्यकारिणी की बैठक दिल्ली में ६-७ और ८ फरवरी को हो रही है जिसमें काश्मीर की हालत पर विचार किया जायगा। हम अनिश्चित समय तक चुपचाप बैठकर यह नही देखते रह सकते कि हमारे कुछ देशवासी, जिनका उद्देश्य उत्तम और उचित है और जिस पर कोई भी सरकार जो दिल से देश का कल्याण चाहती है, सहानुभूति से विचार कर सकती है, मुसीबतें झेलते रहे। मै आपकी धमकियों, अपशब्दों और दुतकार के बावजूद आपको फिर लिख रहा हूं। इसका मतलब सिर्फ यही है कि हम संकट उत्पन्न नही करना चाहते। मुझे अब भी आशा है कि शान्तिपूर्ण निपटारे का कोई न कोई तरीका ढूंढ़ ही लिया जायगा, जिस से कि हम पारस्परिक मतभेदो के होते हुए भी इस सम्बंध में एक होकर काम कर सकें। मै ५ तारीख की शाम को दिल्ली पहुंच जाऊंगा। यदि आप समझते हैं कि मैं ६ तारीख को सवेरे आपके पास आकर बातचीत करूं तो आप कृपा कर मेरे दिल्ली के पते पर, यानी ३० तुगलक क्रेसेंट, नई दिल्ली, में संदेश भेज दें।

आपका शुभेच्छु,
(ह०) श्यामाप्रसाद मुकर्जी,

श्री जवाहरलाल नेहरू,
भारत के प्रधान मंत्री,
नई दिल्ली

श्री नेहरू का उत्तर

नई दिल्ली,
५ फरवरी, १९५३

प्रिय श्यामाप्रसाद,

आपका ३ फरवरी का पत्र मुझे कल मिला। मैं राज्यपाल सम्मेलन में इस तरह लगा रहा कि आप का पत्र आज ही पढ़ पाया और मैं अब काफी रात गये आपके पत्र का जवाब दे रहा हूं।

२. मेरे विचार में आपके पत्र में मुझ पर और हमारी नीतियों पर दोषारोपण किया गया है। इस मामले पर बहस शुरू करने की आप मुझ से आशा मत कीजिये। यदि आप समझते हैं कि मैं गलत नीति पर चल रहा हूं तो मुझे भी उतना ही विश्वास है कि आपने जम्मू और काश्मीर और दूसरे मामलों के बारे में जो नीति अपनाई है वह भारत के हितों और उन आदर्शों के लिये बिलकुल हानिकारक है जिनका हम हमेशा एलान करते रहे हैं। यदि मेरी जीवन कहानी से आपको असफलता का संकेत मिलता है, तो यह मेरा दुर्भाग्य है। हमने जो कुछ भी किया है वह जनता के सामने है और वह मेरे बारे में जो चाहे, धारणा बना सकती है। ऐसे लोगों के निर्णयों का मेरे ऊपर कोई असर नहीं पड़ेगा जो मुझसे बिलकुल भिन्न विचार रखते हैं और जिन के उद्देश्य भी मुझ से भिन्न हैं।

३ मेरे विचार में जम्मू में प्रजा परिषद का आन्दोलन न सिर्फ साम्प्रदायिक है, बल्कि भारत के साम्प्रदायिक और संकीर्ण विचारधारा वाले तत्व उसका समर्थन कर रहे हैं। मुझे लेश मात्र भी संदेह नहीं है कि यदि यह संकीर्ण विचारधारा हमारे देश भर में अपना ली गई तो उससे जम्मू और काश्मीर राज्य को ही नहीं बल्कि भारत के व्यापक हितों को भी भारी विपत्तियों का सामना करना पड़ जायेगा। मेरा ऐसा विश्वास है और इस कारण मैं सिर्फ यही रास्ता अपना सकता हूं कि नितान्त अविचारपूर्ण धारणाओं पर आधारित इस आन्दोलन का विरोध करूं। यह हमारी सरकार की राय है और वह इस पर अटल रहना चाहती है और इस नीति पर अमल करना चाहती है।

४. मेरी समझ में नहीं आता कि क्या आप के पत्र का अर्थ धमकी देना है? निश्चित रूप से यह आन्दोलन जिस रूप में आगे बढ़ा है और जैसा कि शायद इसके सम्बन्ध में सोचा भी गया था, उसमें भारत के लिये एक खतरा पैदा हो गया है। मैंने अक्सर कहा है कि जम्मू के लोगों को शायद भारत के बहुत से लोगों की तरह ही कुछ शिकायतें हों जिन पर विचार करने की ज़रूरत

हो। लेकिन, यह स्पष्ट है कि इन शिकायतों का आन्दोलन के वास्तविक उद्देश्यों से कोई सम्बन्ध नही है। वास्तव मे हाल ही मे जम्मू और काश्मीर की सरकार ने इन शिकायतों की जांच करने के लिये एक कमीशन बनाया है। यदि आन्दोलन का सम्बन्ध मुख्यतया इन शिकायतों से होता तो इस समिति की नियुक्ति का स्वागत किया जाता। इसकी बजाय खुले रूप से यह कहा गया है कि आन्दोलन जारी रहेगा।

५. इससे हम इस अवश्यम्भावी निष्कर्ष पर पहुंचते है कि जिन लोगों का इस आन्दोलन से सम्बन्ध है वे विशेष रूप से लोगो की किसी आर्थिक और दूसरी ऐसी ही शिकायतो में दिलचस्पी नही रखते बल्कि वे दूसरी ही तरह से सोचते है। जम्मू और काश्मीर का प्रश्न अक्सर ससद के सामने उपस्थित हुआ है और अब तक जो कुछ भी किया गया है, वह ससद की स्पष्ट स्वीकृति के साथ किया गया है। यह आन्दोलन इस कारण वैधानिक मामलों के सम्बन्ध मे ससद के फैसलो के विरुद्ध है। इस आन्दोलन का सीधा सम्बन्ध, जैसा आप जानते है और जैसा आपके पत्र में कहा गया है, एक ऐसे मामले से है जो एक अन्तर्राष्ट्रीय मसला है और जिसकी बड़ी जटिलतायें है। इस प्रकार जम्मू मे कुछ ऐसे लोग है जो आन्दोलन द्वारा और आपका भी समर्थन प्राप्त करके अन्तर्राष्ट्रीय मामलो और भारत की वैदेशिक नीति मे दखल दे रहे है। आपको स्मरण होगा कि संसद मे एक समय मैंने यह कहा था कि संसद के कुछ सदस्य जम्मू आन्दोलन का समर्थन कर रहे है। आप और कुछ दूसरे लोगों ने इस बयान का विरोध किया था और उसे गलत बताया था। मेरा खयाल है कि मैने उस समय जो कुछ बताया था, अब उसे गलत नही कहा जा सकता।

६. यह आन्दोलन वास्तव मे एक महत्वपूर्ण विषय में हमारी संसद के अधिकार और प्रभुता को चुनौती है। यह अन्तर्राष्ट्रीय मामलो मे भी दखल देना चाहता है जिसके भीषण परिणाम निकल सकते है। मुझे सचमुच आश्चर्य हुआ है कि आप मुझ से या मेरी सरकार से ऐसी किसी कोशिश का समर्थन कराना चाहते है जो लोकराजवादी सरकार और नीति के स्वीकृत सिद्धांतों की जड मे प्रहार करना चाहती है।

७. आप ने अपने पत्र मे जो प्रश्न उठाये है, उन का ससद मे कई बार जवाब दिया जा चुका है और ससद के सदस्यो को उससे सतोष हुआ है। मै संसद के फैसलो की, जिसके आदेशो पर मुझे प्रधान मन्त्री की हैसियत से अमल करना पडता है, अवहेलना नही करना चाहता। यह स्पष्ट है कि हमारी ससद और उसके निर्णयों के प्रति आप को कोई अधिक आदर नही है। वैधानिक और लोकतन्त्रवादी सिद्धांतो की बात छोड भी दी जाय, तो भी मेरा यह सोचना स्वाभाविक था कि प्रत्येक विचारवान व्यक्ति को यह स्पष्ट होगा कि व्यावहारिक दृष्टि से जम्मू के इस आन्दोलन से भारत के दुश्मनो को ही लाभ पहुच सकता है। इससे शायद उन उद्देश्यो को भी प्राप्त नही किया सकता जिनकी आन्दोलन शुरू करने वालो ने घोषणा की है। यदि ऐसा है तो मै यह सोचने मे असमर्थ हू कि यह गलती क्यो दुहराई जाय अगर इसका वास्तविक उद्देश्य कुछ दूसरा या भिन्न न हो। क्रमश: हम इस निष्कर्ष पर पहुंच जाते है कि यह शिकायतों को दूर करने के लिये एक साधारण आन्दोलन नही है बल्कि यह तो एक विध्वंसकारी आन्दोलन शुरू करने की कोशिश है जिससे न सिर्फ जम्मू पर ही बल्कि भारत के बाकी भाग पर भी असर पडता है। कोई भी सरकार इसका एक ही जवाब दे सकती है।

८. आपने सुझाव दिया है कि गिरफ्तार किये गये लोगों को रिहा कर दिया जाये और एक सम्मेलन किया जाय, शायद उन्ही लोगों के साथ। न भारत सरकार और न ही जम्मू और काश्मीर सरकार तब तक किसी व्यक्ति को गिरफ्तार या कैद करना चाहती है जब तक कि ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न न हो जांय जिन के कारण उन्हे ऐसा करने के लिये मजबूर होना पडे। लेकिन जब इस प्रकार की परिस्थितिया पैदा हो जाती हैं तब उसे अपना कर्त्तव्य निभाना पड़ता है। आपके सुझाव का इस समय यह अर्थ होगा कि भारत सरकार और जम्मू और काश्मीर सरकार काम करना बद कर दे और सत्ता उन लोगो को सौप दे जो मूल वैधानिक मसलो के मामले में ऐसे आन्दोलन द्वारा उनका विरोध कर रहे है जो अधिकाधिक हिंसात्मक और विध्वसक होता जा रहा है। पद त्याग करने और उस कर्त्तव्य से विमुख होने का हमारा कोई इरादा नहीं है जो जनता और ससद द्वारा हमे सौंपा गया है। 'यह एक असाधारण बात होगी कि यह आन्दोलन बराबर चलता रहे और साथ ही जो इस आन्दोलन को चला रहे है, उन्हें अपनी कार्रवाईयां जारी रखने के लिये पूर्ण स्वतंत्रता दे दी जाय और बातचीत के लिये बुलाया जाय। मुझे खेद है कि मै प्रजा परिषद या उसके साथियों के साथ इस प्रकार का व्यवहार करने मे असमर्थ हूं। यदि वास्तव मे यह आन्दोलन चलता रहा तो सरकार को यह सोचना होगा कि इस मामले मे वह आगे क्या कार्रवाई करे? भारत की और साथ ही जम्मू और काश्मीर के लोगों की भलाई, जिसका दायित्व हम पर आ पडा है, किसी एक वर्ग के ऐसे लोगो की इच्छाओं से अधिक महत्व रखती है जो सांप्रदायिकता और सकीर्णता के आधार पर ही सोचते और काम करते है और जो काल्पनिक वर्ग लाभ के लिये देश के हित को भारी नुकसान पहुंचाने मे ज़रा भी नही हिचकिचाते।

९. आपने अपने पत्र में लिखा है कि आप आज शाम को दिल्ली पहुंच रहे है और कल सवेरे मुझसे मिल सकेंगे। यदि समय मिला तो मैं हमेशा ही आप या दूसरे ऐसे लोगो से, जो मुझ से मतभेद रखते है, मिलने को तैयार हूं। लेकिन, मुझे खेद है कि कल और अगले एक या दो दिन मे पूर्ण रूप से व्यस्त हूं। मै यह स्वीकार करता हू कि आपका पत्र पढ़ कर मुझे ऐसा मालूम पड़ा कि बातचीत के लिये उसमे कोई समान आधार नही है। आपने खुद कहा है कि हम इस महत्वपूर्ण विषय पर एक दूसरे से भिन्न मत रखते है।

आपका शुभेच्छु,

(ह०) जवाहरलाल नेहरू

डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी,
ससद् सदस्य,
३० तुगलक क्रेसेंट,
नई दिल्ली

डाक्टर मुकर्जी का पत्र

३०, तुगलक क्रेसेंट,
नई दिल्ली,
७ फरवरी, १९५३

प्रिय जवाहरलाल जी,

आपका ५ फ़रवरी का पत्र मुझे कल सवेरे मिला। विश्वास कीजिये कि मै आपके साथ अनावश्यक रूप से लम्बा चौड़ा पत्र-व्यवहार नही करना चाहता। मेरी एक मात्र इच्छा यह जानने की थी कि क्या दोनों पक्षों द्वारा एक-दूसरे के दृष्टिकोण को समझने और ऐसा समझौता करने की कोई सम्भावना है जो जम्मू और काश्मीर समेत सारे देश के हित में हो। स्पष्ट है कि आप उन लोगो के दृष्टिकोण को समझना तक नहीं चाहते जो आपसे भिन्न विचार रखते हैं—बातचीत करने की बात तो दूर रही। आपने अपने पत्र में बहुत कुछ भला बुरा कहा है और मै उसका उत्तर नही देना चाहता। मुझे विश्वास है कि ठंडे दिमाग़ से सोचने पर आप को स्वयं इस पर खेद होगा कि आप दलील का जवाब दलील से नही दे सके और सिर्फ उन लोगों पर बुरे खयालात रखने का आरोप लगा सके है और उन्हें कलकित कर सके है जो आप की सरकारी नीति से मतभेद रखते है। कमीशन से कोई आशा या विश्वास पैदा नही हुआ है। उसे जिन बातो पर विचार करने को कहा गया है, वे सकीर्ण है। उसकी रचना मे खामियां है। उसे ऐसे वातावरण मे काम करना है जिसमे अविश्वास और कटुता फैली हुई है। यह स्पष्ट है कि वह मूल राजनीतिक और वैधानिक मामलों पर विचार नही कर सकता।

मै और बहुत से दूसरे लोग ईमानदारी से यह अनुभव करते है कि जम्मू और काश्मीर राज्य मे रहने वाले कुछ हमारे देशवासियो की यह मांग देश विरोधी, छिन्न भिन्न करने वाली या सांप्रदायिक नही है कि उनके राज्य को अन्तिम रूप से भारत मे मिला दिया जाय और स्वतत्र भारत के सविधान के अनुसार उस का शासन चलाया जाय। आप इस स्वाभाविक मांग को बल प्रयोग से या दमन के द्वारा कुचल नही सकते। जैसा आप और शेख अब्दुल्ला साहब कहते है, कि इस मांग को पूर्ण रूप से कार्यान्वित करने में व्यावहारिक कठिनाइयां है तो उनको हल करने के उपाय भी है जिनसे पारस्परिक सद्भाव और विश्वास का वातावरण पैदा होगा जिस मे डर और संदेह के लिये कोई स्थान न रहेगा। जम्मू और काश्मीर सम्बन्धी मामलो में अधिकारियों ने कई बार भारी ग़लतियां की है और कई महत्वपूर्ण क्षणों में उन्होने ग़लत मनोवैज्ञानिक तरीका अपनाया है।

जनता को बाध्य होकर यह आन्दोलन शुरू करना पडा है क्योंकि वैधानिक तरीकों से कोई मामला हल न हो सका। यह आन्दोलन आप से आप शुरू हुआ है और इसे अधिक से अधिक

लोगो का समर्थन प्राप्त है। हमने राज्य के बाहर से उसे कोई उत्तेजना नही दी। हमने संसद् में आप के इस आरोप का खंडन किया था और मैं फिर इस का खंडन करता हूं। निस्संदेह सत्याग्रह-आन्दोलन साधारण तरीके से शुरू नही किया जा सकता; और न ही उसे हल्के दिल से शुरू करना चाहिये। लेकिन जब जम्मू निवासी यह देखते हैं कि समझौते की बातचीत द्वारा महत्वपूर्ण मामलों को हल करने के बारे में उन के प्रयत्नो का अधिकारी वर्ग कोई जवाब नही देता तो उन के लिये कौन दूसरा रास्ता खुला रह जाता है? आज भी, जब वे अपने जन्म सिद्ध अधिकारो के लिये मुसीबतें सह रहे हैं और रक्त की आहुति दे रहे हैं तब भी, वे आप की सहानुभूति और आप का ध्यान आकर्षित नही कर पाते। आपकी और शेख अब्दुल्ला की दृष्टि में वे राजनीतिक अछूत हैं। इस दुखद घटना की गहनता इस तथ्य से और बढ जाती है कि वे उस वर्ग के प्रतिनिधि हैं जिनकी देशभक्ति, बहादुरी और सैनिक शक्ति से सभी परिचित हैं।

आपने लोकतंत्र की चर्चा की है। क्या लोकतन्त्र का अर्थ यह होता है कि पाशविक बल की मदद से बहुसंख्यको के मत को अल्पसंख्यको पर लाद दिया जाय? मैं मानता हूं कि अल्प-संख्यको को रुकावटें और गतिरोध पैदा करने का नियम नही बना लेना चाहिये। एक सच्चे लोकतान्त्रिक राष्ट्र में, जहां बहुसंख्यक वर्ग, विरोधी वर्ग की विचार धारा को समझने को तैयार हो और समझने का सामर्थ्य रखता हो और जहां दोनों वर्ग पारस्परिक कल्याण के लिये विवेकपूर्ण ढंग से आपस के विचारो में तालमेल पैदा कर सकते हो, ऐसी बाधाओ को दूर किया जा सकता है और करना भी चाहिये। जब इनसर्वा धिकारवादी प्रवृत्तियो के कारण इस बुनियादी तरीके का लोप हो जाता है तो इस बात का खतरा पैदा हो जाता है कि संसद लोकतान्त्रिक मंच नही बनी रह सकेगी। संसद् देश से बडी नही है और लोगो को दी जाने वाली सामयिक चेतावनी से या सरकार की किसी गलत नीति के विरुद्ध उन से अपील करने से, निश्चय ही संसद् के अधिकारो का उल्लंघन नही होता।

मेरी समझ में नही आता कि आप मेरे पत्र को किस तरह धमकी समझ सकते हैं। हमारा धमकी देने का कोई इरादा नही है और हमारे पास ऐसा करने के साधन नही है। हमारा संघर्ष अगर अवश्यभावी हो गया तो वह अहिंसात्मक होगा और इसका उद्देश्य सरकारी नीति का विरोध करना होगा जो दूसरे उपायो से बदली नही जा सकी। हम इस प्रकार सिर्फ यह आशा कर सकते हैं कि जनमत को सक्रिय रूप से जगाया जाय। कौन जानता है कि यह आप के और शेख अब्दुल्ला के विचारो में भी परिवर्तन लाने में सहायक हो।

जहां तक धमकियो और शक्ति के प्रयोग का सम्बन्ध है, सरकार के सभी साधन आपको और शेख अब्दुल्ला को प्राप्त हैं। आपकी चिट्ठी के ढंग से ऐसा प्रतीत होता है कि आप अपने विरोधियो के विरुद्ध उनका प्रयोग करने के लिये दृढ-प्रतिज्ञ हैं। मैं आप को विश्वास दिलाना चाहता हूं कि हम आपके क्रोध और रोष के परिणामों का सामना करने को तैयार हैं। पंजाब में निवारक निरोध अधिनियम के अधीन हमारे कई सदस्यो और कार्यकर्त्ताओ की गिरफ्तारी से यह पता चलता है कि आगे क्या होने वाला है। इससे पता चलता है कि हमारे देश में लोकतंत्र एक विचित्र ढंग पर चलाया जा रहा है। कांग्रेस पार्टी, शेख अब्दुल्ला और उन की पार्टी के

लोगो और ऐसे अन्य लोगों को, जो काश्मीर सम्बन्धी वर्तमान नीति का समर्थन करते है, अपना प्रचार करने के अटूट अवसर मिलते रहेगे। यद्यपि भारत भर मे काश्मीर सम्बन्धी आपकी नीति के विरोध मे सभाए और प्रदर्शन होते रहे है, फिर भी अब तक एक भी ऐसी घटना नही घटी है जहा हिंसात्मक तरीको से काम लिया गया हो और कोई विध्वसक कार्रवाई की गई हो। इस पर भी भारत मे इस समय लागू होने वाले लोकतात्रिक सिद्धातो के अनुसार उचित राजनीतिक विरोध को दबाने के लिये निवारक निरोध अधिनियम की शरण लेनी पड़ी। आप अक्सर गाधीवाद; गाधीवादी तरीके और 'उपचारक स्पर्श' की चर्चा करते है और यह दावा करते है कि आप और आप की सरकार शक्ति के प्रयोग या हिसा पर विश्वास नही रखती और हमेशा बहस और समझौते के आधार पर आगे बढने के लिये चितित रहती है। इस बात से आभास होता है कि एक ऐसे मामले के बारे मे, जिसका निश्चित रूप से गभीर असर पड सकता है, आपको अपने घोषित सिद्धातो पर चलाने के मेरे प्रयत्न अब तक असफल रहे है। आप बार बार यह कहते है कि जम्मू आन्दोलन से अन्तर्राष्ट्रीय उलझने पैदा होने की सभावनाये है। इसका मतलब समझने मे मै असमर्थ हू। इसके लिये आप मुझे क्षमा करेगे। आजकल कोई भी व्यक्ति यह दावा नही करेगा कि काश्मीर की समस्या को आप ने जिस तरह सभाला है, उससे हमारी अतर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा बढ गई है और हमे बडा अन्तर्राष्ट्रीय समर्थन और सहानुभूति प्राप्त हुई है। दूसरी ओर, इस सम्बन्ध मे आप की नीति से समस्या देश और विदेश दोनो जगह अधिक उलझ गई है। राजनीति तो यह है कि आप निष्पक्ष भाव से सारे सवाल पर पुनः विचार करे और मिथ्या अतर्राष्ट्रीयता पर जोर देने की बजाय राष्ट्रीय सगठन के लिये ऐसी परिस्थितिया पैदा करे जिसमे भिन्न भिन्न विचारधाराओं और हितो मे उचित रूप से सामजस्य किया गया हो। यदि आप इस मे सफल हो गये तो उससे आपको अधिक बल और प्रतिष्ठा प्राप्त होगी — अतर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे भी।

आपके पत्र मे एक गलतफहमी स्पष्ट है जो मुझे दूर कर देनी चाहिये। ऐसा प्रतीत होता है कि आप समझते है कि मैने यह सुझाव दिया है कि जम्मू आन्दोलन चालू रखना चाहिये और इसके साथ ही बदियो की रिहाई का आदेश दे दिया जाना चाहिये जिसके उपरान्त ही जम्मू के प्रतिनिधियों के साथ एक सम्मेलन किया जाय। यह सही नही है। यदि आप प्रजा परिषद् के नेताओ और दूसरे लोगो के साथ बात चीत करने का फैसला करते है तो यह स्पष्ट है कि आन्दोलन इस बीच नही चलेगा और उसे अस्थायी तौर पर बद कर दिया जायगा। पिछले सभी ऐसे अवसरो पर ऐसा ही हुआ था — जैसा कि आप स्वय अपने अनुभव से जान सकते है।

मै लम्बी चिट्ठी नही लिखना चाहता। मै यह पत्र-व्यवहार इस भारी खेद के साथ बद करना चाहता हू कि आपके पत्रो मे वैसी ही क्लेशजनक बाते व्यक्त की गई है जो भारत मे अंग्रेजी राज्य के मुखिया सत्ता और प्रतिष्ठा के मद मे जन-साधारण की इच्छाओ की अवहेलना करते समय अपनी ऐसी ही चिट्ठियो मे व्यक्त किया करते थे। भिन्नता सिर्फ यह है कि हम कुछ महत्वपूर्ण मामलो पर मतभेद रखते हुए भी एक ही माता की सन्तान है और दोनो पक्षों की जरा सा सद्भावना और सहनशीलता से हम एक गंभीर फूट से बच सकते है। यदि आप देश के

र्वोच्च हित मे यह अनुभव करें कि आप प्रतिष्ठा और भागीदारी के सवालों को अलग रख कर ांतिपूर्ण समझौते के उपाय ढूढें, तो हम हमेशा पूरे दिल से आप को सहयोग देगे। अब इतने वलम्ब के बाद भी मेरा पक्का विश्वास है कि यह सभव है, और इस दिशा मे आप ही पहल र सकते हैं।

आपका शुभेच्छु,
(ह०) श्यामाप्रसाद मुकर्जी

श्री जवाहरलाल नेहरू,
भारत के प्रधा . मंत्री,
नई दिल्ली

श्री नेहरू का उत्तर

नई दिल्ली,
१० फरवरी, १९५३

प्रिय श्यामाप्रसाद,

मुझे आपका ७ फरवरी का पत्र मिला। उसे पढ़ने के बाद मैं स्वीकार करता हूं कि मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि हम कुछ अलग-अलग विचार रखते हैं और एक ही शब्द का मेरे और आपके लिये अलग-अलग अर्थ है। आप बराबर मुझ पर यह आरोप लगा रहे हैं कि मैंने निंदा और ऐसी ही दूसरी बाते की है। आपकी खुद की चिट्ठियों में ऐसी भाषा का प्रयोग नही किया गया है जिसे नर्म और आकर्षक कहा जा सकता हो।

यह स्पष्ट है कि मेरे साथी और मै,—और मुझे विश्वास है कि शेख अब्दुल्ला और उनके साथी भी यह नहीं चाहते कि जम्मू मे यह दुर्भाग्यपूर्ण झगड़ा जारी रहे। हमारे लिये इससे अधिक प्रसन्नता की बात और कोई नहीं हो सकती कि इसे खत्म कर दिया जाय– सिर्फ इस लिये ही नहीं कि वह स्वयं खराब है बल्कि इससे अधिक इसलिये कि आन्दोलन से कटुता और घृणा की भावना शेष रह जायगी। हम यह झगड़ा नही चाहते थे। यह हो सकता है कि भारत सरकार या जम्मू और काश्मीर सरकार द्वारा स्वीकृत कई नीतियो का जम्मू के लोगों के एक वर्ग ने समर्थन नही किया। मेरा विश्वास है कि वे अपने विचार प्रकट करने के लिये इस तथाकथित सत्याग्रह के अतिरिक्त भी, जिससे झगड़ा उठ खड़ा हुआ है और लोगों को मुसीबतें उठानी पड़ी है, दूसरे भले तरीकों से काम ले सकते थे। मेरे पास सौ से भी अधिक छोटे-बड़े अधिकारियो की पूरे विवरण समेत एक सूची है जिसमे जिला मजिस्ट्रेट, सुपरिण्टेण्डेण्ट आफ पुलिस और पुलिस सिपाहियों के नाम भी शामिल हैं। इन लोगों को तथाकथित सत्याग्रहियों की भीड़ ने सख्त घायल कर दिया। यह शांतिपूर्ण आन्दोलन का साक्षी नहीं है।

लेकिन, चाहे जो कुछ हो, मुझे इस आन्दोलन को खत्म करने में सब से अधिक प्रसन्नता होगी। आप कहते हैं कि आर्थिक और दूसरी शिकायतों की जांच करने के वास्ते जो कमीशन बनाया गया है, उसमें कमी है और उसे जिन विषयों की जांच करने को कहा गया है वे सीमित हैं। साथ ही आपने कहा है कि यह स्पष्ट है कि यह कमीशन मूल राजनीतिक और वैधानिक मामलों पर विचार नहीं कर सकता और उसे अविश्वास और कटुता के वातावरण में काम करना पड़ रहा है। मैं अंतिम दो बातों से पूर्णतया सहमत हूं जिनका सम्बंध मूल वैधानिक मामलों और वातावरण से है। इस वातावरण को कोई कैसे सुधार सकता है? सच है कि ऐसा इस अनुचित ढंग से शुरू किये गये आन्दोलन को बंद करके और इन आर्थिक और दूसरी समस्याओं का सामना करके किया जा सकता है। दूसरा रास्ता यह है कि आन्दोलन के खत्म होने तक कमीशन न बनाया जाय। यदि यह रास्ता अपनाया जाता तो

लोग हमारी इसलिये आलोचना करते कि हमने सही कदम नही उठाया क्योकि कोई दूसरी घटना घट रही थी।

जहां तक कमीशन की रचना का संबंध है, मुझे सदेह है कि किसी दूसरी तरह का कमीशन आपको अच्छा प्रतीत होता। यह एक सरकारी कमीशन है। इसके प्रधान चीफ जस्टिस हैं जिन पर यह विश्वास किया जा सकता है कि वह निष्पक्ष दृष्टिकोण अपनायेंगे। यदि गैर सरकारी लोगो की नियुक्ति की गई होती तो निश्चय ही यह आलोचना की जाती कि वह लोगो का ठीक-ठीक प्रतिनिधित्व नही करते। इसलिये यह अच्छा हुआ कि एक ऊंचे दर्जे का सरकारी कमीशन नियुक्त किया गया जिसका दलो और ऐसी ही दूसरी बातों से कोई संबंध नही है।

कमीशन को जिन विषयों पर जांच करने को कहा गया है, वे व्यापक हैं। लेकिन सचमुच मे उनका संबंध राजनीतिक और वैधानिक सवालो से नही है। क्या आप चाहते हैं कि कमीशन संसद के फैसलो पर और गम्भीर राष्ट्रीय और अतर्राष्ट्रीय मसलो पर अपना फैसला दे? मुझे सचमुच इस आलोचना पर आश्चर्य होता है।

मैंने राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे काश्मीर समस्या को हल करने मे पहले गलतियां की या नही की, इसका वर्तमान समस्या से कोई संबंध नही है। हमें तो यह देखना है कि इस समय क्या स्थिति है और उसे कैसे हल करना है। मैं यह समझने मे विल्कुल असमर्थ हूं कि इन बड़े-वडे मामलो को लेकर, जिनका सारे भारत पर और अंतर्राष्ट्रीय मामलों पर अवसर पड़ता है, किस प्रकार स्थानीय आन्दोलन शुरू किया जा सकता है। यह देखते हुए कि जब यह स्थानीय वर्ग आक्रमणकारी और विध्वसकारी कार्रवाइयां कर रहा है तव मेरी समझ में यह नहीं आता कि हम किस प्रकार इन मामलों पर इन स्थानीय वर्गो के साथ बातचीत कर सकते हैं।

मेरे विचार मे यह महत्वपूर्ण है। वास्तव मे इसका अर्थ संसद् के अधिकारो के विरुद्ध आन्दोलन करना है। यह सच है कि संसद् देश से बड़ी नही है लेकिन साधारण तौर पर यह माना जाता है कि संसद् देश का प्रतिनिधित्व करती है। इसी प्रकार यह भी निश्चित है कि जम्मू के लोगों का एक वर्ग देश से बड़ा नहीं हो सकता। क्या यह ठीक है कि स्थानीय वर्ग ऐसे मामलों के बारे मे जिनका असर सारे देश पर पड़ता है, समस्त देश और ससद् पर दबाव डाल सकता है? मुझे विश्वास है कि यदि आप इस सारे प्रश्न पर विचार करे तो आप यह अनुभव करेंगे कि यह एक ऐसा मसला है जो आगे नही बढ़ाया जा सकता। मुझे तो भारत के संविधान के अनुरूप और संसद् के अधिकारों के अनुसार काम करना है। यदि संसद् कोई ऐसा निर्णय करती है जो मैं समझता हूं कि बुनियादी मामलों में मेरे विश्वासों के विरुद्ध है, तो मेरा यह कर्तव्य हो जाता है कि मैं अपना पद त्याग दूं, और दूसरो को उस पद पर काम करने दूं। किसी भी हालत में मैं संसद् के फैसलों को अस्वीकार नही कर सकता। साधारण तौर पर हरेक राज्य में, चाहे वह जम्मू और काश्मीर हो या भारत का दूसरा राज्य हो, राज्य सरकार को संविधान के अधीन कुछ मामलों को निपटाने का अधिकार होता है। भारत सरकार

कुछ मामलो में हस्तक्षप कर सकती है और कई अन्य मामलों में सलाह दे सकती है। वह राज्य की स्वायत्तता को कुचल नहीं सकती। आपको मुझ पर सर्वाधिकार हड़पने की प्रवत्ति से प्रेरित होने का आरोप लगाकर प्रसन्नता होती है। मेरे विचार मे यह आरोप सफलतापूर्वक उन लोगों पर लगाया जा सकता है जो संसद् और समस्त देश पर अपनी इच्छा लादना चाहते है।

मैं वास्तव में कोई बहस नही करना चाहता क्योकि जैसा मैंने कहा, हमारे विचार अलग-अलग हैं। मै इस बात की भरसक कोशिश करता हू कि मै भारत के संबध मे अपने सिद्धातों को सामने रखकर किसी स्थिति के औचित्य पर फैसला करू। मै इस दिशा में अपनी भरसक कोशिश करता हूं। मुझे इसमे कोई संदेह नही कि आप भारत का कल्याण चाहते है। लेकिन, यह बात सच है कि भारत के लिये क्या अच्छा है, इस संबध मे हमारे विचार अलग-अलग मालूम पडते हैं। इसके कारण ही हमने बहुत कुछ अलग-अलग क्षेत्रो में काम किया है। हममें से कोई भी उस भूत को न तो मिटा ही सकता है और न ही उसकी उपेक्षा कर सकता है जिसके कारण वर्तमान स्थिति पैदा हुई है। मै समझता हू कि भारत की समस्याओं या और किसी समस्या को सांप्रदायिक ढंग से हल करना एक खराब और संकीर्ण तरीका है और व्यक्ति, वर्ग और राष्ट्र के लिये हानिकारक है। आपने मेरे 'सांप्रदायिक' शब्द के प्रयोग पर आपत्ति की है और मेरे आरोप को गलत बताया है। यह स्पष्ट है कि हम अलग-अलग ढंग से सोचते है और हमारी कार्रवाइयां शायद हमारी विचारधारा का ही नतीजा है।

लेकिन, इस सब से वर्तमान स्थिति में कोई सहायता नही मिलेगी। मै आपको विश्वास दिलाता हूं कि मै दिल से भारत मे शाति चाहता हू। किसी भी काम को करने में इसकी पहले जरूरत है। लेकिन, आप मुझ से यह आशा नही कर सकते कि मै कोई ऐसी बात करूंगा जो बिल्कुल गलत और देश के हित के विरुद्ध जाती हो। क्या मै आपको यह सलाह देने का साहस करूं कि आप जम्मू में आन्दोलन खत्म करने के लिये अपना प्रभाव डालेगें क्योकि इस आन्दोलन से संभवत: कोई अच्छाई नहीं होगी और उससे निश्चय ही बहुत हानि हो जायेगी ?

आपका शुभेच्छु,
(ह०) जवाहरलाल नेहरू

डाक्टर श्यामाप्रसाद मुकर्जी,
संसद् सदस्य,
३०, तुगलक क्रेसेंट,
नई दिल्ली

डाक्टर मुकर्जी का पत्र

३०, तुगलक क्रेसेंट,
नई दिल्ली,
१२ फरवरी, १९५३

प्रिय जवाहरलाल जी,

आपके दस फरवरी के पत्र के लिये धन्यवाद। इससे कोई मतलब सिद्ध नही होगा कि हम इस पत्र-व्यवहार मे अपने अपने विचारो का औचित्य साबित करे या उनकी अच्छाइयों और बुराइयों पर बहस करे। मेरा विश्वास है कि आपके और मेरे बीच देश की वास्तविक आवश्यकताओं के बारे मे बहुत सी ऐसी बातें है जो समान है और हो सकती है। हम कुछ महत्वपूर्ण मामलों पर अलग अलग विचार रख सकते है। लेकिन, इस क्षेत्र मे भी इस बात का कोई कारण नही है कि हम एक-दूसरे के दृष्टिकोण को समझने की कोशिश न करें और एक दूसरे पर दोषा-रोपण करते रहे या तुच्छ उद्देश्यों से प्रेरित होने के आरोप लगाते रहे।

मै आप से सहमत हू कि जम्मू के झगडे के सम्बन्ध मे इस प्रकार की बातचीत बेकार और असंगत है। आप की और मेरी भी यह राय है कि आन्दोलन जितनी जल्दी सभव हो, खत्म हो जाय। प्रश्न यह है कि मूल सिद्धातो को छोडे बिना यह कैसे किया जा सकता है ?

यह प्रश्न तो उठता ही नही कि कोई आक्रमणकारी और विध्वसक तरीको से राज्य पर फैसला करने के लिये दबाव डाल रहा है। आन्दोलन इस लिये शुरू करना पडा कि सभी वैधानिक उपाय बेकार रहे। उन के द्वारा यह भी सभव न हो सका कि संबन्धित दलों का मिला-जुला सम्मेलन हो सके। आप ने लिखा है कि आप के पास ऐसे १०० अधिकारियो की सूची है जिन्हे पिछले कुछ सप्ताहो मे भीड ने घायल किया। मेरे पास भी अधिकारियो द्वारा की गई ज्यादतियो और अत्याचारो के उदाहरण मौजूद है जिन को देखते हुए अधिकारियो की सराहना नही की जा सकती। इस के अलावा कोई ३०–४० व्यक्ति पुलिस की गोली से मारे गये है। सरकारी पक्ष का कोई भी व्यक्ति नही मारा गया है। इस से निश्चित रूप से यह पता चलता है कि भीड ने और चाहे जो कुछ भी किया हो, आन्दोलन शुरू करने वालो ने अहिसात्मक तरीको पर अमल करने के आदेश दिये है। मै इस समय इन पहलुओ पर नहीं जाना चाहता। आपके समान ही मै भी चिंतित हूं कि वर्तमान आन्दोलन खत्म हो जाय। यह आपकी मेहरबानी है कि आप ने आन्दोलन को बद करने के लिये मुझे अपना प्रभाव डालने को कहा है। मै ऐसा करने को तैयार हूं। लेकिन शर्त यह है कि आप और शेख अब्दुल्ला इस को कार्यान्वित करने के लिये उचित वातावरण पैदा करें।

यह एक ही तरीके से हो सकता है और वह यह है कि,आन्दोलन शुरू करने वालों को यह विश्वास दिलाया जाय कि आप और शेख अब्दुल्ला उन के साथ सभी मामलों पर खुले दिल से

बातचीत करने और ऐसे फैसले करने को तैयार है जिन से उनकी उचित मागे पूरी हो जायेगी। मेरा सुझाव है कि आप और शेख अब्दुल्ला कुछ नेताओ से भेट करें। अच्छा होगा कि यह भेट दिल्ली मे हो। यदि यह बात उनके पास तक पहुंचा दी जायेगी तो मुझे आशा है वे आन्दोलन को अस्थायी तौर पर बद कर देंगे। दूसरी ओर यदि आप यह समझते हैं कि मुख्य-मुख्य बातो के बारे मे अतिम समझौते की सभावना है और आन्दोलन के वापस लेने के बारे मे पहले से ही कुछ समझौता न होने से इस तरीके से उलझने पैदा हो जायेगी, तो हम उन बातो पर विचार कर ले जो उठाई गई हैं और यह जानने की कोशिश करे कि उचित हल किस तरह निकल सकता है। स्वाभाविक है कि मैं प्रजा परिषद् की ओर से कोई वचन नही दे सकता। लेकिन मैं उसके विचारो से कुछ हद तक परिचित हू और इस कारण मैं आपके सामने विचार के लिये कुछ सुझाव रख सकता हू। यदि साधारण रूप से समझौता हो गया तो मैं पडित प्रेमनाथ डोगरा को पत्र भेज कर अपनी सलाह दूंगा।

विचारणीय बातें इस प्रकार हैं :—

(१) जम्मू और काश्मीर सविधान सभा द्वारा एक प्रस्ताव पास करा कर राज्य के भारत मे प्रवेश को अन्तिम रूप देना।

(२) मूल अधिकार, नागरिकता, वित्तीय सगठन, चुगी उठाना, सर्वोच्च न्यायालय, राष्ट्रपति के सकटकालीन अधिकार और चुनाव का सचालन जैसे मामलो मे भारतीय सविधान की धाराओं को राज्य मे लागू करना।

(३) भारतीय सविधान की शेष धाराओ के बारे मे शेख अब्दुल्ला को यह बताना चाहिये कि वे यदि कोई सशोधन करना चाहते हैं तो वे क्या होंगे? इन पर उनकी अच्छाइयों-बुराइयों को ध्यान मे रखते हुए विचार करना।

(४) अतिम रूप से स्वीकृत जम्मू और काश्मीर का विधान भारतीय सविधान का अंग होगा।

(५) जम्मू और लद्दाख की सीमाओं मे परिवर्तन किये बिना स्वायत्तता के अधिकार देना।

(६) भारतीय झडे की प्रभुता स्वीकार करना।

(७) पाकिस्तान अधिकृत प्रदेशों को मुक्त करने और उस पर कब्जा करने के बारे मे हमारी नीति का निर्धारण।

(८) जाच कमीशन बनाना जिस मे अधिकतर जज राज्य के बाहर के हों और जो धर्मार्थ ट्रस्ट, पुलिस की ज्यादतियों और पीड़ितों के परिवारों के लिये, विशेषकर जिन्हें गोली से मार दिया गया है, मुआवजा देने आदि के बारे में शिकायतों की जांच कर।

(९) ऐसे लोगों की पेशनो और सम्पत्ति आदि की वापसी की व्यवस्था करना जिन की सम्पत्ति आदि जब्त करने के आदेश दे दिये गये हैं।

ऊपर किसी ऐसे विषय की चर्चा नहीं की गई है जिसका दोनों पक्षों द्वारा खुले दिल से विचार किये जाने पर उचित हल न निकल सकता हो। यदि आप अनुभव करते हैं कि मेरा तरीका सही है तो हम पूरी-पूरी बातचीत कर सकते हैं और यह फ़ैसला कर सकते हैं कि काश्मीर और सारे देश के हित में क्या कदम सब से अच्छा होगा।

आप और शेख अब्दुल्ला मिथ्या प्रतिष्ठा पर अड़े न रह कर समय के अनुसार काम कर सकते हैं और एक नया वातावरण पैदा कर सकते हैं जिस में दूसरे मतभेदों के होते हुए भी सभी पार्टियां काश्मीर के बारे में राष्ट्रीय माग को आगे बढ़ा सकती हैं। मुझे आशा है कि आप उस भावना का आदर करेंगे जिससे प्रेरित हो कर यह पत्र लिखा गया है और इस सकट को दूर करने के लिये कार्रवाई करेंगे।

आपका शुभेच्छु,
(ह०) श्यामाप्रसाद मुकर्जी

पडित जवाहरलाल नेहरू,
भारत के प्रधान मत्री,
नई दिल्ली

श्री नेहरू का उत्तर

नई दिल्ली,

१२ फ़रवरी, १९५३

प्रिय श्यामाप्रसाद,

आप के १२ फरवरी के पत्र के लिये धन्यवाद।

मै हमेशा ही आपसे मिलने और किसी भी विषय पर बातचीत करने को तैयार हू। लेकिन, आप ने जिन विषयो पर विचार करने का सुझाव रखा है उन मे से अधिकाश पर न तो कोई सरकार स्वय विचार कर सकती है और न ही उन के सम्बन्ध मे किसी गैर सरकारी सस्था या व्यक्तियो के साथ बातचीत की जा सकती है। जम्मू और काश्मीर की सविधान सभा के लिये यह बडा सरल काम होगा कि वह भारत मे राज्य के प्रवेश की पुष्टि या समर्थन के लिये एक प्रस्ताव पास कर दे। वह अवश्य ऐसा कर सकती है। लेकिन इससे इस मामले को वह अतिम रूप प्राप्त नही हो सकता जो शायद आप चाहते है। इसका सम्बध तो दूसरी बातो से है जिस पर हमारा पूरा-पूरा अधिकार नही है। वास्तव मे जम्मू और काश्मीर राज्य की सविधान सभा ने विभिन्न मामलो के बारे मे जो कार्रवाई की है, विशेपकर भारत सरकार के साथ किये गये समझौते की जो पुष्टि की है, उससे प्रवेश की बात और अधिक पक्की हो जाती है। वह इस से भी आगे निकल जाता है।

आप ने जिन विषयो की चर्चा की है उन मे से कई तो जम्मू और काश्मीर सविधान सभा द्वारा बनाये जाने वाले सविधान मे शामिल कर लिये गये है। इस काम मे जो विलम्ब हो रहा है, मेरे विचार मे उसका एक कारण खुद यह आन्दोलन है जिस से जम्मू और काश्मीर की सरकार को इन सवालो को जल्दी से निपटाने की दिशा मे कठिनाइयो का सामना करना पड़ रहा है।

यह बिलकुल स्पष्ट रूप से बता दिया गया है और कई अवसरो पर उस पर अमल भी किया गया है कि भारतीय झडा ही राज्य का सर्वोच्च झडा है।

जहा तक पाकिस्तान-अधिकृत भूमि को मुक्त करने और उस पर कब्जा करने का सवाल है, यह निश्चित रूप से ऐसा प्रश्न नही है जिस पर विचार किया जा सके क्यो कि यह कई प्रकार के राजनीतिक और सैनिक मामलो पर निर्भर है। आप यह स्वीकार करेगे कि कोई भी सरकार, चाहे वह कितनी ही शक्तिशाली क्यो न हो, अपनी मर्ज़ी के अनुसार काम नही कर सकती। उस की कुछ सीमाये होती है। बडी-बडी शक्तियां भी अपनी मर्ज़ी का काम नही कर सकती। और इस कारण उन मे आपस मे झगड़े हो जाते है और गतिरोध पैदा हो जाता है जिस से विश्व-शांति के लिये खतरा बना रहता है। वास्तव मे जम्मू आन्दोलन के कारण पाकिस्तान-अधिकृत

भूमि की समस्या का निपटारा अधिक मुश्किल हो गया है क्यो कि वहा के लोगों पर उस के गम्भीर प्रभाव पड़े होंगे। हम बल-प्रयोग से किसी की भूमि हड़पने का इरादा नही रखते और हमे सम्बधित लोगो की सद्भावना पर निर्भर रहना पडता है।

जम्मू और काश्मीर को छोड़ दूसरे राज्यो मे भी हमे स्थानीय स्वायत्तता का सम्मान करना होगा ; और यद्यपि हम वहा अपने साथियो को सलाह देते है, फिर भी हम हस्तक्षेप नही करते। कोई भी राज्य सरकार अपना काम नही कर सकती अगर उस पर केन्द्रीय सरकार दबाव डालती रहे।

मुझे विश्वास है कि सही तरीका यह होगा कि आन्दोलन वापस ले लिया जाय और सभी लोग इस बात की कोशिश करें कि पहले जैसी स्थिति और सद्भावना फिर पैदा हो जाय। यह किसी भी प्रकार के विकास और शिकायतो और निर्योग्यताओ को दूर करने की बुनियादी बात है।

आप को यह अवश्य ही पता होगा कि इस समय हमारे प्रतिनिधि गिरजाशंकर बाजपेयी, डाक्टर ग्रेहम और पाकिस्तानी प्रतिनिधि के बीच जेनेवा मे बातचीत चल रही है। इस प्रकार के अन्तर्राष्ट्रीय मामलो में कोई भी देश अपनी बात मनवाने की कोशिश नही कर सकता। यहा तक कि बहुत बडा शक्तिशाली देश भी ऐसा नही कर सकता और हमे सावधानी के साथ धीरज से आगे बढ़ना और साथ ही अपने सिद्धातो के बारे मे दृढ रहना होगा। हम इस बात की कल्पना कर सकते है कि वर्तमान जम्मू आन्दोलन का न सिर्फ उन लोगो पर जो हमारे दुश्मन है, बल्कि दूसरे देशों मे भी और विशेष रूप से जेनेवा मे हो रही बातचीत पर क्या असर पड सकता है।

आपका शुभेच्छु,
(ह०) जवाहरलाल नेहरू

डाक्टर श्यामाप्रसाद मुकर्जी,
ससद-सदस्य,
३०, तुगलक क्रेसेंट,
नई दिल्ली

डाक्टर मुकर्जी का पत्र

३० तुगलक क्रेसेंट,
नई दिल्ली,
१४ फ़रवरी, १९५३

प्रिय जवाहरलाल जी,

आप के १२ फरवरी के पत्र के लिए धन्यवाद।

मेरा विश्वास है कि मतभेद काफी कम हो गये है और यदि हम सचमुच चाहे तो जल्दी ही मैत्रीपूर्ण समझौता कर सकते है। मैने अपनी चिट्ठी में जिन खास बातो की चर्चा की है वे जम्मू के लोगो के दिलो मे डर और सदेह के कारण पैदा हुई है। इन्हे किस तरीके से दूर किया जाय—यह उन के साथ साफ-साफ बात करने ही से तय किया जा सकता है। आप को और शेख अब्दुल्ला को सब से पहले यह निश्चय करना है कि क्या आप उन से बातचीत करने को तैयार है? मेरा आप से अनुरोध है कि आप ऐसा करे। आप ने कहा है कि सही रास्ता यह होगा कि आन्दोलन बद कर दिया जाय और सभी लोग यह कोशिश करे कि पहले जैसी हालत और सद्भाव पैदा हो जाय। प्रश्न यह है कि यह कैसे किया जाय? जब एक आन्दोलन चल रहा होता है और आन्दोलन चलाने वाले यह समझते है कि वे सही उद्देश्य के लिये सघर्ष कर रहे है, बलिदान कर रहे है तथा मुसीबते झेल रहे है तो समझौते की कोई भी कार्रवाई पारस्परिक सद्भाव के आधार पर मानवीय विचारो को ध्यान मे रख कर ही की जानी चाहिये। इस लिये मेरा सुझाव है कि आप दोनो प्रजा परिषद के चुने हुए प्रतिनिधियो से भेट करने को राजी हो जाय और इस के बाद तुरत ही आन्दोलन बद कर दिया जाय। मेरा विश्वास है कि इस के बाद आप से आप पहले जैसी हालत और सद्भाव पैदा हो जायेगा। यदि उन की मागों पर निष्पक्ष और उचित ढग से विचार किया गया तो इसका कोई कारण नही कि वे उसका वैसी ही भावना से उत्तर न दे।

मैने अपनी पिछली चिट्ठी में कुछ खास बातो की चर्चा की थी जिस से आप को पता चल जाय कि आप को किन-किन बातो को निपटाना होगा। मै आप की चिट्ठी का ब्योरेवार जवाब नही देना चाहता। लेकिन, आप ने जिन बातो की चर्चा की है उन के कुछ पहलुओ की ओर सकेत करना चाहता हू।

पहली बात का सम्बन्ध प्रवेश को अन्तिम रूप देना है। यह न सिर्फ जम्मू के लिये, बल्कि सारे राज्य के लिये और वास्तव मे सारे भारत के लिये, महत्वपूर्ण विषय है। मै आपसे और शेख अबदुल्ला से दिल से अनुरोध करता हू कि आप मेरे सुझाव को स्वीकार कर ले और जम्मू और काश्मीर सविधान सभा द्वारा प्रवेश के समर्थन मे एक प्रस्ताव पास कराने की इजाज़त दे दे। सयुक्त राष्ट्र सघ और पाकिस्तान चाहे जो रुकावटे उपस्थित करे, हमारा मामला इस कार्रवाई से कमज़ोर नही पडेगा। दूसरी ओर भारत और काश्मीर मे आपको संगठित रूप से

समर्थन प्राप्त हो जायेगा। सच बात तो यह है कि हम प्रवेश के सवाल को लेकर सयुक्त राष्ट्र सघ में नहीं गये थे। यदि आज संयुक्त राष्ट्र संघ यह जानना चाहता है कि जनता की राय क्यो ली जा रही है तो हम निश्चित रूप से अपनी कार्रवाई के औचित्य को साबित कर सकते है कि यह इच्छा तो भारतीय विधान परिषद् द्वारा प्रदर्शित की जा चुकी है और भारत और काश्मीर के बीच यह मामला तय हो चुका है। संयुक्त राष्ट्र संघ और पाकिस्तान के बीच उलझन शायद बनी रहेगी और उसे शायद किसी दूसरे तरीक़े से आगे चलकर हल करना होगा।

मै मानता हूं कि ऐसा एलान शायद इस समय, जब कि जेनेवा मे बातचीत चल रही है, विवेकहीन हो। लेकिन, यदि जम्मू के प्रतिनिधियों को इस बारे मे विश्वास दिला दिया गया तो मै स्वय उनसे इतने से सन्तोष करने को कहूगा और यह भी कहूगा कि इस समय खुले एलान के लिये मजबूर न करे। इसको जेनेवा वार्ता खत्म होने पर साधारण तरीक़े से कार्यान्वित किया जा सकता है।

जहा तक पाकिस्तान अधिकृत इलाक़े को मुक्त करने और उस पर फिर से क़ब्जा करने का सम्बन्ध है, किसी सार्वजनकि एलान की आवश्यकता नही है। लेकिन, सम्बन्धित लोगों से आपकी बातचीत के फलस्वरूप स्थिति की पूरी-पूरी जानकारी की जा सकती है।

जैसा आप कहते है, यदि भारतीय झण्डा सर्वोच्च है तो इस के दिन प्रति दिन के सरकारी प्रयोग के बारे मे वैसी ही व्यवस्था की जाय जैसी देश भर मे है। राज्य के झण्डे को इसके साथ विशेष अवसरों पर फहराया जाय।

संविधान की धाराओ को लागू करने के बारे मे, हमे सभी टैकनिकल बाते अलग कर देनी चाहिये और व्यावहारिक तरीके से काम करने के लिये राज़ी हो जाना चाहिये। जैसा कि आपको विदित होगा, शेख़ अब्दुल्ला के साथ आपका जो समझौता हुआ है उसे विस्तृत बनाने की जरूरत है, क्योकि कुछ ऐसी बाते स्पष्ट नही की गई हैं जिन पर समझौता हो चुका है। मेरे विचार में हमे इसमे कोई कठिनाई नही होगी कि हम ऐसे न्यूनतम विषयों के बारे मे राज़ी हो जायं जो जम्मू और काश्मीर मे तुरन्त ही लागू कर दिये जायेगे। शेष विषयों के बारे में हम तब तक विचार करना स्थगित रखेगे जब तक कि हमे यह पता न चल जाय कि राज्य अधिकारी क्या-क्या प्रस्ताव करना चाहते है।

जहां तक शिकायतों और दूसरे स्थानीय मामलों का सम्बन्ध है, शेख अब्दुल्ला ने बार-बार यह ऐलान किया है और मुझे भी लिखा है कि वह निष्पक्ष जांच के लिये तैयार है। प्रश्न सिर्फ़ उन विषयों को तैयार करने का है जिन के बारे में जांच होनी है और ऐसी अदालत बनानी है जिस पर सभी सम्बन्धित लोगों की आस्था हो। कैदियों की रिहाई और प्रतिबन्धों और सज़ाओं को ख़त्म करने से कोई कठिनाई उपस्थित नही होगी।

मै ईमानदारी के साथ यह अनुभव करता हूं कि यदि हम सब लोग नया वातावरण पैदा करने की सच्ची इच्छा के साथ आगे काम करें तो स्थिति का सामना किया जा सकता है। विश्वास कीजिये कि मैं आपके इस विचार से सहमत हूं कि आन्दोलन के जारी रहने या उसके भारत

के किसी हिस्से तक बढ़ जाने से गम्भीर असर हो सकते हैं। मैं यह जानने के लिये सचमुच चिन्तित रहा हूं कि क्या इससे किसी भी तरह बचा जा सकता है ? आपकी अन्तिम चिट्ठी से मुझे आशा बंधी है कि यह सम्भव है। आपके और शेख अबदुल्ला के हाथ में सत्ता है और स्वाभाविक रूप से आपका दायित्व अधिक महत्वपूर्ण है। सिद्धान्तों को तिलांजलि दिये बिना आप निश्चित रूप से उदारता के साथ काम कर सकते हैं और ऐसा वातावरण उत्पन्न कर सकते हैं जहां हम सभी मतभेदों के बावजूद काश्मीर-समस्या के बारे में संयुक्त मोर्चा खडा कर सकते हैं।

मैं कल सवेरे कलकत्ते के लिये रवाना हो रहा हूं और सोमवार को तीसरे पहर वापस आ जाऊंगा। यदि आप यह अनुभव करें कि इस समय निजी वार्ता से सहायता मिलेगी तो मैं आज किसी भी समय आपके पास आने और बातचीत करने को तैयार हूं। आपको अपने विचार शेख अब्दुल्ला को बताने होंगे या उन्हें स्थिर करने से पहले ही आप शेख अब्दुल्ला से सलाह लेना चाहेंगे। मैंने उन्हें उनके अन्तिम पत्र के जवाब में कल एक पत्र लिखा है और आपके साथ हुये पत्र-व्यवहार की नक़ल भी उन्हें भेजी है। मैं उन्हें आपका १२ फ़रवरी का पत्र नहीं भेज सका हूं क्योंकि वह तब तक मुझे नहीं मिला था। मैं आज शाम को ६ और ७॥ बजे के बीच के समय को छोड़ और किसी भी समय जो आपको सुविधाजनक हो, आपके पास आने और बातचीत करने को तैयार हूं।

आपका शुभेच्छु,
(ह०) श्यामाप्रसाद मुकर्जी

पंडित जवाहरलाल नेहरू,
भारत के प्रधान मंत्री,
नई दिल्ली

श्री नेहरू का उत्तर

नई दिल्ली,
१५ फ़रवरी, १९५३

प्रिय श्यामाप्रसाद,

आपके चौदह फ़रवरी के पत्र के लिए धन्यवाद । कल मे इतना व्यस्त रहा कि आपका पत्र रात गये ही पढ पाया और तब यह पता चला कि आपने शाम को बातचीत करने का सुझाव दिया था । उस समय तो बहुत विलम्ब हो चुका था और अब आप कलकत्ते जा चुके हैं ।

इस सम्बन्ध मे कोई मतभेद नही हो सकता कि हम सब जम्मू मे आम दिनों जैसी स्थिति क़ायम करने और इस निंदनीय आन्दोलन और झगड़े को खत्म करने के लिये चिन्तित है । लेकिन आपने अपने पत्र मे जो प्रश्न उठाये हैं उनमे से कई इतने महत्वपूर्ण और उलझे हुये है कि उन पर एकाएक और जल्दबाज़ी से विचार नही किया जा सकता । जहां तक उन मे से कुछ का सम्बन्ध है, हमने भारत सरकार और जम्मू और काश्मीर सरकार के बीच पूरी पूरी और लम्बी बहस के बाद कुछ फ़ैसले किये थे और यह मुझे बहुत स्पष्ट नही है कि हम उन पर समय से पहले ही किस प्रकार दो सरकारो की आपसी वार्ता की तरह विचार कर सकते है ।

जैसा कि मै आपको बता चुका हूं, साधारण तौर पर प्रत्येक राज्य इन समस्याओं को निपटाता है और केन्द्रीय सरकार कभी-कभी सलाह देने के अलावा उनके मामलो मे हस्तक्षेप नही करती । कोई दूसरा रास्ता न सिर्फ हमारी वैधानिक कार्यविधि के विरुद्ध होगा बल्कि वह राज्य की ज़िम्मेदारी के रास्ते मे रुकावट बन जायगा ।

जम्मू और काश्मीर की संविधान सभा की बैठक निकट भविष्य मे होगी । शायद वह अपनी कुछ कमेटियो की रिपोर्टों पर विचार करेगी । आजकल इन कमेटियों की बैठकें हो रही है । मेरी समझ मे नही आता कि काश्मीर सरकार किस प्रकार इस कार्यप्रणाली के विरुद्ध जा सकती है । जहां तक सविधान सभा द्वारा प्रवेश के समर्थन मे प्रस्ताव पास कराने का प्रश्न है, वह अगर चाहे तो अवश्य ही ऐसा कर सकती है । वास्तव में उसकी सारी कार्रवाइयां प्रवेश पर आधारित है और इस बात को मान कर ही की जाती है । किसी प्रस्ताव द्वारा उसमें वृद्धि नही की जा सकती । मुझे ऐसे प्रस्ताव पर कोई आपत्ति नही है, इस बात से कठिनाई पैदा नहीं होती—बल्कि कठिनाई तो यह कहने से पैदा होती है कि इस प्रकार के प्रस्ताव से सयुक्त राष्ट्र संघ मे इस मामले की चर्चा ही अन्तिम रूप से खत्म हो जाती है । हम ने अब तक जो दृष्टि-कोण अपनाया है और जिसकी सार्वजनिक रूप से घोषणा की है, वह यह है कि जम्मू और काश्मीर संविधान सभा को इस मामले पर और दूसरे मामलों पर अपने विचार प्रगट करने का अधिकार है—लेकिन हमने संयुक्त राष्ट्र सघ को जो आश्वासन दिये है, वे हमारी ज़िम्मेदारी हैं और उनका फ़ैसला इस तथ्य को ध्यान में रखते हुये किया जायगा ।

जैसा कि मैं आपको पहले बता चुका हूं, सच्ची कठिनाई तो इस मामले की सम्पूर्ण पृष्ठ-भूमि में निहित है। किसी के उद्देश्य चाहे जो कुछ रहे हों, इस तरीके से निस्सन्देह भीषण साम्प्रदायिकता और उससे उत्पन्न होने वाले झगड़े ही पैदा हो सकते हैं, इसलिये यह भारत की उन बुनियादी नीतियों के विरुद्ध जाता है जिन पर हम कुछ सफलता के साथ अमल कर रहे हैं। इससे सम्बन्ध रखने वाले अधिकतर लोगों ने इन सरकारी नीतियों का विरोध किया है और ऐसा रास्ता अपनाया है जिससे हम साम्प्रदायिक और देश के हितों के विरुद्ध समझते हैं। इस आन्दोलन के समर्थन में जो भाषण दिये गये वे उग्र और हिंसात्मक रहे हैं और उनसे यह मूल साम्प्रदायिकता की भावना बाहर आ गई है। इतवार को दिल्ली की सभा में जो भाषण दिये गये उनकी रिपोर्ट पढकर मुझे बडा दुख हुआ। इन भाषणों को पढ़ने से पता चला कि जम्मू का सवाल पीछे पड़ गया और नीति सम्बन्धी दूसरे बड़े-बडे सवालों पर ज़ोर दिया गया। इन दो बुनियादी तरीकों के बीच कोई तीसरा रास्ता नहीं है। हम उन सिद्धान्तों पर, जिन्होंने हमारा पथ-प्रदर्शन किया है, और उन नीतियों पर जिन पर हम चलते रहे हैं, अटल रहेंगे। इनको छोडे बिना सरकार अपनी शक्ति भर खुशी से सब कुछ करने को तैयार है जिससे जम्मू और काश्मीर में आम दिनों जैसी स्थिति पैदा हो जाय। मुझे विश्वास है कि शेख अब्दुल्ला और उनकी सरकार का भी यही विचार है। लेकिन हम यह आन्दोलन नहीं चाहते और पहली कार्रवाई यह होनी चाहिये कि आन्दोलन पूरी तरह से वापस ले लिया जाय।

आपका शुभेच्छु,
(ह०) जवाहरलाल नेहरू

डाक्टर श्यामाप्रसाद मुकर्जी,
३०, तुगलक क्रेसेंट,
नई दिल्ली

डाक्टर मुकर्जी का पत्र

३०, तुगलक क्रेसेंट,
नई दिल्ली,
१७ फरवरी, १९५३

प्रिय जवाहरलाल जी,

आपके १५ फरवरी के पत्र के लिये धन्यवाद। वह मुझे कल तीसरे पहर कलकत्ता से लौटने पर मिला। मेरा उन बातो को दुहराने का कोई इरादा नही है जो मैंने अपनी पिछली चिट्ठियो मे आपके विचारार्थ लिखी थी। ऐसा प्रतीत होता है कि हम सब जम्मू और काश्मीर मे पहले जैसी स्थिति और शान्तिपूर्ण सहयोग पैदा करने के लिये चिन्तित है। लेकिन, हमें वर्तमान सकट को दूर करने के लिये क्या करना चाहिये—इस पर हम एक मत नही हो रहे है।

आपने अपने राजनीतिक विरोधियो पर फिर से साम्प्रदायिकता का आरोप लगाया है। मै उस का खडन कर चुका हू और मैंने यह बताने की कोशिश की है कि उन मूल समस्याओं के प्रति हमारा दृष्टिकोण क्या है जिन पर हम आपसे मतभेद रखते है। जब हम ऐसे मानसिक तरीके की बातचीत शुरू करते है जिसका विशेष मामलो से कोई सम्बन्ध नही होता तो बातचीत कोरे सिद्धान्तो तक सीमित हो जाती है और मनगढत आरोप लगाये जाते है। शायद किसी दिन आप और हममें से कुछ लोग, जिन पर आप साम्प्रदायिकता का आरोप लगाते है, एक शान्त वातावरण मे मिल सकेगे और तब साफ-साफ बातचीत करेंगे जिससे कि हम एक-दूसरे के विचारो को समझ सके और यह जानने की कोशिश करे कि आपका या मेरा तरीका कहा तक देश के हित के लिये हानिकारक है और वे कौन-कौन से विषय है जिन पर हम एक मत नही है। लेकिन, ये बाते हमारी तात्कालिक आवश्यकताओ के लिये बेकार है। लगातार एक दूसरे के उद्देश्यो के बारे मे सन्देह करते रहने से हम जम्मू आन्दोलन को जल्दी ही खत्म करने का रास्ता नही बना सकते।

आपने दिल्ली मे चुनाव के सम्बन्ध मे होने वाली सभाओ मे दिये गये भाषणो की कुछ रिपोर्टों की चर्चा की है। मै स्वय तीन सभाओ मे उपस्थित था। मुझे निजी तौर पर सभी भाषणो की पूरी-पूरी बातो की जानकारी नही है। इसमे कोई सन्देह नही है कि कुछ भाषण जोरदार थे और जहा तक कई वक्ताओ का सम्बन्ध है, वे समस्या को हल करने के बारे मे दरअसल मतभेद रखते है। लेकिन, खुफिया पुलिस की रिपोर्टों पर या कुछ दिलचस्पी रखने वाले लोगो की बातो पर विश्वास करना उचित नही है। यदि प्रसग के बिना भाषण के अश पढ कर सुनाये जाये तो अक्सर गलतफहमी पैदा हो जाती है। कांग्रेस मंच से दिये गये कुछ भाषणो की रिपोर्टें मुझे मिली है जिनसे न सिर्फ बुरे विचारों का प्रदर्शन ही होता है बल्कि ऐसे विचारो का भी प्रदर्शन होता है जो ग़लत और विकृत है।

के पीछे पहुची। वे नारे उत्तेजना देने वाले और आपत्तिजनक थे। मैंने इन पर कोई खास ध्यान नही दिया क्योकि मैं जानता हू कि कभी-कभी पार्टी का उत्साह लोगों की अविवेकपूर्ण कार्रवाई करने के लिये उत्तेजित कर देता है और उन पर गम्भीरता के साथ ध्यान देने की जरूरत भी नही है। निस्सन्देह इन सब बातो से भिन्न-भिन्न पार्टियो के नेताओ और कार्यकर्ताओं के सार्वजनिक व्यवहार के बारे में महत्वपूर्ण प्रश्न उठ खडे होते है। यदि इस देश में सार्वजनिक जीवन का ठीक तरह से विकास होना है तो हमें जीवन के अच्छे आदर्शो पर चलना होगा। लेकिन, इन बातो से जम्मू आन्दोलन की समस्या को निपटाने के हमारे तात्कालिक काम में कोई असर नही पडता और न ही पडना चाहिये। आप ऐसा सोचते प्रतीत होते है कि मैंने आपको यह सुझाव दिया है कि आप तुरन्त ही कुछ महत्वपूर्ण वैधानिक मामलो पर, उनमे निहित दूसरी बातो की परवाह किये बिना, या इस प्रकार के विचार के लिये निर्धारित कार्यप्रणाली से काम लिये बिना, वायदे करने को राजी हो जाय। इसमे तो कोई सन्देह नही है कि अन्त मे ये मामले सरकार को ही हल करने है, लेकिन, यदि उन लोगो के दिलो मे, जिन पर इन फैसलो का भारी प्रभाव पडेगा, डर या सन्देह घुस गया है या अगर कुछ मामलो मे सरकार की नीति ऐसे लोगो द्वारा बुरी तरह से नापसन्द की जाती है तो उनके प्रतिनिधियो से बातचीत करने और उनके दृष्टिकोण समझने का कोई न कोई रास्ता तो होना ही चाहिये। साधारण तौर पर इसका कोई कारण नही है कि ऐसी बातचीत दोनो पक्षो द्वारा खुले दिल से क्यो न हो; और यदि यह पता चले कि राष्ट्रीय हित मे नीति मे कुछ सशोधन करने की जरूरत है तो सरकार सशोधन करने को क्यो न राजी हो। यहा पर वैधानिकता का कोई प्रश्न ही नही उठता। हा, कुछ ऐसी विशेष कमेटिया, सविधान सभा और अन्य सस्थाए है जिन्हे इन सभी मामलो पर विचार करना होगा। भारत और जम्मू और काश्मीर--दोनो मे ही सरकारी सत्ता सुसगठित राजनीतिक दलो के हाथ मे है जिन्हे भारी बहुमत प्राप्त है और यदि उनके नेता कोई सही राजनीतिक निर्णय करते है तो इसका कोई कारण नही कि उनकी सस्थाये उनके फैसलो पर अमल न करे।

वास्तव मे प्रश्न यह है कि आन्दोलन किस तरह खत्म किया जाय। मैंने एक तरीका सुझाया है जो स्पष्ट रूप से आपको स्वीकार नही है। दुर्भाग्य की बात है कि आपने यह दुहराने के अलावा कि आन्दोलन बन्द कर दिया जाय और कोई विकल्प प्रस्तुत नही किया।

आपने कहा है कि ऐसा हो जाने के बाद ही अपने सिद्धान्तो और नीतियो को छोडे बिना, जिन पर आप हमेशा चलते रहे है, आप जम्मू और काश्मीर मे आम दिनो जैसी हालत और सहयोग पैदा करने की भरसक कोशिश करेगे। आप मानेगे कि इससे ऐसा वातावरण पैदा नहीं हो सकता जिसमे समझौता किया जा सके। जब कोई भी आन्दोलन कई सप्ताह से चल रहा होता है और उसके फलस्वरूप लोग मर तक जाते है और कई तरह के दमन और ज्यादतियो के आरोप लगाये जाते है, तब उस स्थिति में उसे खत्म नही किया जा सकता। आन्दोलन तभी खत्म किया जा सकता है जब यह समझने के लिये कोई आधार हो कि अधिकारी उन उद्देश्यो पर उचित रूप से विचार करेगे जिन के लिये आन्दोलन शुरू किया गया है। आप महसूस करेंगे कि मैं या भारत का कोई भी व्यक्ति इस आन्दोलन को खत्म नही कर सकता। यह तो वे लोग ही कर

सकते हैं जिन्होंने उसे शुरू किया है और उसके कई नेता इस समय कैद हैं और उन्हें यह बताने की जरूरत है कि भविष्य में क्या होने वाला है ।

इस सवाल पर पूरी तरह विचार करने और आपके इस निश्चय पर कि आन्दोलन पूरी तरह खत्म किया जाय, विचार करने के बाद, क्या मैं निम्नलिखित प्रणाली आपके विचार के लिये प्रस्तुत कर सकता हूं :—

(१) आन्दोलन खत्म किया जाय ।

(२) कैदियों की रिहाई की आज्ञा दी जाय और इस के बाद लोगों को किसी तरह तंग न किया जाय ।

(३) आप और शेख अब्दुल्ला कोई १५ दिन के बाद एक सम्मेलन बुलावें जिसमें सभी राजनीतिक और वैधानिक मामलों पर खुले दिल से बातचीत हो ।

(४) दोनों पक्ष इस बात को पक्का करें कि जम्मू और काश्मीर की एकता बनी रहेगी और स्वायत्तता का सिद्धान्त समूचे जम्मू, लद्दाख और काश्मीर घाटी पर लागू होगा ।

(५) जितनी जल्दी सम्भव हो, नया संविधान लागू किया जाय और कोई ६ महीने के अन्दर चुनाव किये जाय ।

(६) झण्डे के प्रश्न का स्पष्टीकरण किया जाय और भारतीय झण्डे का हर दिन उसी तरह प्रयोग किया जाय जैसा कि देश के दूसरे हिस्सों में किया जाता है ।

(७) अस्पष्ट बातों के ठीक स्पष्टीकरण के बाद ही जम्मू और काश्मीर संविधान सभा अपने अगले अधिवेशन में जलाई-समझौते को लागू करे । जहां तक मूल-अधिकारों, नागरिकता, सर्वोच्च न्यायालय, राष्ट्रपति के अधिकारों, वित्तीय-संगठन, चुनाव-संचालन का सम्बन्ध है, भारतीय संविधान की धारायें लागू की जायें । लेकिन, भूमि प्राप्त करने के सम्बन्ध में छूट दी जा सकती है ।

(८) कमीशन की जांच के विषयों में वृद्धि की जाय और वह सभी शिकायतों की जांच करे ।

(९) इस समय कमीशन में चार सदस्य हैं—चीफ जस्टिस, एकाउन्टेंट जनरल, चीफ कनजरवेटर आफ फारेस्ट और रेवेन्यू कमिश्नर । पिछले तीन सदस्य जम्मू और काश्मीर सरकार के अधिकारी हैं और उनमें लोगों में विश्वास पैदा नहीं हो सकता । कमीशन की रचना पुनः की जानी चाहिये जिसमें दो जज भारत के, और जम्मू और काश्मीर के चीफ जस्टिस शामिल हों जिससे कि उसके निष्पक्ष और प्रतिनिध्यात्मक होने पर कोई आपत्ति न कर सके ।

(१०) जहा तक प्रवेश और दूसरे मामलों को अन्तिम रूप देने का सम्बन्ध है, सम्मेलन इन बातो पर हर पहलू से विचार करेगा और ऐसा समझौता करेगा जो भारत और जम्मू और काश्मीर के सर्वोच्च हित में हो।

यदि समस्या को हल करने के आम तरीके पर कोई समझौता हो जाय तो पंडित प्रेमनाथ डोगरा से सम्पर्क स्थापित करना होगा। अन्तिम फैसला वही करेंगे। हम उन्हे यह सलाह तो देंगे ही कि हमारी राय मे जल्दी ही समस्या को शांतिपूर्ण ढंग से हल करने के लिये क्या करना चाहिये। मुझे विश्वास है कि वह और दूसरे लोग रुकावट नही डालेगे और हर सम्भव तरीके से सहयोग देने को तैयार होगे।

मुझे दमन के तरीके के बारे मे भयभीत करने वाली खबरे मिल रही हैं जिन में औरतों के साथ अत्याचार किये जाने की खबरे भी शामिल है। नेशनल मिलीशिया को भी आन्दोलन दबाने के काम पर लगा दिया गया है। जैसा कि आप जानते होगे, इस टुकडी मे अधिकाश लोग शेख अब्दुल्ला के दल के ही है और इसमे अधिकाश मुसलमान है। आन्दोलन वाले इलाकों से इनकी कार्रवाइयो के बारे में जो खबरे मिल रही है, उनसे घबराहट पैदा होती है। यदि अब उन्हे सरकारी काम के लिये इस्तेमाल करने का विचार है तो इससे स्थिति बहुत बिगड सकती है। अब तक कोई साम्प्रदायिक घटना नही घटी है और न ही सरकारी पक्ष का कोई व्यक्ति मारा गया है। यदि आज सरकार आन्दोलन को दबाने के लिये शक्ति, पुलिस और अर्ध-सैनिक संस्थाओ पर निर्भर करने का फैसला करती है तो इसके बडे भयानक परिणाम हो सकते है।

मैंने समस्या को निपटाने के लिये अपनी शक्ति भर कोशिश की है। मै प्रजा परिषद् की ओर से कुछ वायदा नही कर सकता। जो कुछ मैंने कहा है उस की जिम्मेदारी मुझ पर ही है और मैंने समस्या को हल करने की दिशा में एक आम रास्ता दिखाया है जिससे मेरी समझ में यह दुर्भाग्यपूर्ण अध्याय खत्म हो सकता है।

यदि आप यह अनुभव करते है कि इन सुझावो पर आप विचार कर सकते है और इन पर व्यक्तिगत रूप मे बातचीत की जानी चाहिये तो मै खुशी से अपनी सुविधा के अनुसार आप से आकर मिल सकता हूं। यदि आपने अन्तिम रूप मे यह फैसला कर लिया है कि आन्दोलन बिना शर्त के वापस ले लिया जाय और किसी दूसरी बात पर समझौता नही हो सकता है, तो मुझे बडे खेद के साथ यह निष्कर्ष निकालना होगा कि मेरी कोशिश बेकार रही

आपका शुभेच्छु,
(ह०) श्यामाप्रसाद मुकर्जी

पंडित जवाहरलाल नेहरू,
भारत के प्रधान मंत्री,
नई दिल्ली।

डाक्टर मुकर्जी का पत्र

३०, तुग़लक क्रेसेट,
नई दिल्ली,
२८ फरवरी, १९५३

प्रिय जवाहरलाल जी,

मेरा विचार है कि जम्मू आन्दोलन के बारे मे मेरा और आपका जो पत्र-व्यवहार १७ फरवरी को खत्म हो गया है उसे मैं ३ मार्च को प्रकाशित कर दूं। मुझसे बहुत से लोगों ने इस मामले पर हमारे दृष्टिकोणो के उचित और अनुचित होने के बारे मे पूछताछ की है। हम दोनों के लिये भी यह उचित ही होगा कि हमारे अपने-अपने विचार—विशेषकर शाति-पूर्ण समझौते के लिये की गई मेरी कोशिशें—जनता को अच्छी तरह मालूम हो जाय। मेरा विचार इस पत्र व्यवहार को ३ मार्च को प्रकाशित कर देने का है। मुझे आशा है कि आप भी १७ फरवरी को खत्म होने वाले पत्र-व्यवहार के उसी दिन प्रकाशित किये जाने की आज्ञा दे'देगे।

मैं शेख अबदुल्ला को भी ऐसा ही पत्र लिख रहा हू। मैं आज रात हवाई जहाज से कलकत्ता जा रहा हूं और ३ मार्च को सवेरे वापस आ जाऊगा।

पंडित जवाहरलाल नेहरू,
प्रधान मत्री

आपका शुभेच्छु,
(ह०) श्यामाप्रसाद मुकर्जी

श्री नेहरू का उत्तर

नई दिल्ली,
१ मार्च, १९५३।

प्रिय श्यामाप्रसाद,

आपका २८ फ़रवरी का पत्र मिला। आप अवश्य ही जम्मू-आन्दोलन के बारे में मेरे साथ हुये पत्र-व्यवहार को प्रकाशित कर सकते हैं।

भवदीय,
(ह०) जे. नेहरू

डाक्टर श्यामाप्रसाद मुकर्जी,
संसद् सदस्य,
३०, तुग़लक क्रेसेंट,
नई दिल्ली

भाग २

अब्दुल्ला-मुकर्जी पत्र-व्यवहार

*

डाक्टर मुकर्जी का पत्र शेख अब्दुल्ला के नाम

७७, आशुतोष मुकर्जी रोड,
कलकत्ता--२५,
९ जनवरी, १९५२

प्रिय शेख साहब,

श्री जवाहरलाल नेहरू को जो पत्र मे लिख रहा हूं उसकी एक प्रति आपके लिये भी साथ ही भेज रहा हू। इस पत्र मे जो कुछ कहा गया है उसमे बहुत कुछ आपके लिये भी है। मै इस कहे को अब दुहराना नही चाहता। मै आपसे आग्रह करता हूं कि आप पहल करे और जम्मू आन्दोलन को समाप्त करे। आपने स्वयं अपने जीवन मे इस बात को सिद्ध किया है कि दमन से कोई भी जन-प्रिय आन्दोलन दबाया नही जा सकता। इस मामले मे भी इतिहास की पुनरावृत्ति होगी। आपको एक प्रजातान्त्रिक नेता के रूप मे अपने विरोधियो के दृष्टिकोण को समझना होगा और उन लोगो की न्यायसंगत एवं उचित मागो को स्वीकार करना होगा, जो कि आपके और श्री नेहरू के विरुद्ध सघर्ष कर रहे है। ये प्रश्न केवल आप के राज्य को ही प्रभावित नही करते बल्कि सारे भारत पर असर डालते है। मुझे आशा है कि परिस्थिति के और अधिक बिगडने से पहले आप कोई कदम उठायेगे।

मुझे यह भी आशा है कि जिस भावना से मै आपको और श्री नेहरू को लिख रहा हूं उसको आप समझेगे। एक दूसरे को बुरा भला कहने से समस्या का कोई हल नही निकलेगा। प्रश्न ऐसे है जिन पर विश्वास और समझदारी की भावना से विचार किया जाना चाहिये और जिन का एक ऐसा हल निकाला जाना चाहिये जो सभी सम्बन्धित लोगों के लिये साफ और न्यायसंगत हो।

आपका शुभेच्छु,
(ह०) श्यामाप्रसाद मुकर्जी

शेख मुहम्मद अब्दुल्ला,
मुख्य मंत्री,
जम्मू और काश्मीर,
जम्मू

डाक्टर मुकर्जी का पत्र

७७, आशुतोष मुकर्जी रोड,
कलकत्ता—२५,
३, फरवरी, १९५३

प्रिय शेख साहब,

मैंने ९ जनवरी को श्री जवाहरलाल नेहरू के नाम अपने पहले पत्र की एक प्रति आपको भेजी थी। मुझे उनका उत्तर मिल चुका है पर आपकी ओर से अभी तक पत्र की प्राप्ति की सूचना भी नही मिल सकी। फिर भी मैं श्री नेहरू को भेजे गए अपने जवाब की एक प्रति आपके लिये भी रवाना कर रहा हूं।

मैं ५ फरवरी की सन्ध्या को दिल्ली पहुचूंगा। यह बडी कष्टपूर्ण बात है कि आप, जो आप से मतभेद रखते हैं उन्हें एक दम गलत समझते हैं। आप ऐसे तरीके से चल रहे हैं जो जम्मू और काश्मीर राज्य के समेत सारे भारत के लिये ही नाशकर सिद्ध हो सकता है। फिर भी मैं आशा करता हूं कि आप अवसर की गम्भीरता को समझेंगे और एक शान्ति-पूर्ण समझौते का मार्ग निकालेंगे।

आपका हितेच्छु,
(ह०) डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी

शेख मुहम्मद अब्दुल्ला,
मुख्य मन्त्री,
जम्मू और काश्मीर

शेख साहब का उत्तर

जम्मू तवी,
४ फरवरी, १९५३

प्रिय डाक्टर साहब,

हैदराबाद से लौटने पर मुझे आपका ९ जनवरी का पत्र, जिसके साथ आपने श्री नेहरू को लिखे अपने पत्र की एक प्रति भी नत्थी की थी, मिल सका। इसी कारण उत्तर देने में देर हो गई।

मैं आपको इस बात के लिये धन्यवाद देता हूं कि आपने मुझे जम्मू की हालत पर, जिसमें कि आपने इतनी रुचि दिखाई है, कुछ कहने का अवसर दिया है। जब मैं पिछले साल सितम्बर में आपसे श्रीनगर में मिला था तो मैंने आपके सामने जम्मू और काश्मीर राज्य सम्बन्धी कुछ खास प्रश्नों के बारे में अपने दृष्टिकोण की बात खोल कर रखी थी। मुझे सन्तोष हुआ था कि इस बातचीत के फलस्वरूप आपने हमारी स्थिति को कुछ-कुछ समझा था क्योंकि तत्काल बाद के अपने भाषणों में आपने उन कठिनाइयों के विषयों में, जो कि मेरे और मेरे साथियों के सामने हैं, कम या अधिक एक सहानुभूतिपूर्ण रुख ही दिखाया था।

पर अब दुःख के साथ मैं यह देखता हूं कि जम्मू की आज की इस अजीब हालत पर आप निष्पक्ष दृष्टिपात नहीं कर रहे। उल्टे आप सरकार पर यह आक्षेप करते हैं कि उसने आन्दोलन-कर्ताओं को दबाने के लिये बल प्रयोग किया। आपका ऐसा विचार प्रतीत होता है कि इस परि-स्थिति के पैदा होने का उत्तरदायित्व हम पर है। आपको इतनी शीघ्रता में कोई निर्णय नहीं करना चाहिये था।

आपने प्रजा परिषद् की उचित मांगों का जिक्र किया है और जोर दिया है कि उनको मान लेना चाहिये। इससे पहले कि मैं इस पक्ष पर कुछ कहूं, परिषद् ने राज्य के भारत-प्रवेश के प्रश्न के प्रति ही जो रुख दिखाया है उसकी हम ठीक-ठीक परीक्षा कर लें। इस बात की पक्की गवाही मौजूद है कि प्रजा परिषद् सारे काश्मीर की समस्या का हल साम्प्रदायिक आधार पर बलात् करना चाहती है। इसके नेताओं ने जनता में इसी प्रकार के विचार व्यक्त किये हैं और मैं नीचे उनके भाषणों के कुछ अंश उद्धृत करता हूं। वर्तमान आन्दोलन के पीछे वास्तविक लक्ष्य क्या है ? —इस विषय में कोई भी सन्देह इन विचारों को पढ़ कर नहीं रहता —

—"काश्मीर का और हमारा एक रास्ता नहीं है। शेख हमें स्वीकार नहीं। हम यह सहन नहीं कर सकते कि जम्मू और लद्दाख का सर्वनाश हो जाये। हम चाहते हैं कि लोगों का प्रजा परिषद् में अन्ध विश्वास हो और वे हमारे इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये सर पर कफन बांध कर तैयार हो जाएं।"

(श्री मदन लाल, मन्त्री, नगर प्रजा परिषद्, सांम्बा)
(२०-१०-५२)

—"हम शेख अब्दुल्ला और नेशनल कांफ्रेंस के दूसरे कार्यकर्ताओं को खत्म कर देंगे । हम उन का खून पी लेंगे । हम इस सरकार को उखाड़ फेंकेंगे और इसे काश्मीर भेज देंगे । हम इस राज्य को पसन्द नहीं करते ।"

—श्री ऋषि कुमार कौशल, सदस्य प्रजा परिषद् कार्य कारिणी, २३-११-५२ को रियासी में)

ये लोग वास्तव में क्या चाहते हैं, यह प्रजा परिषद् के हाल ही के एक प्रकाशन में स्पष्ट किया गया है । इस में कहा गया है :—

"वर्तमान संविधान सभा में ७५ सदस्य हैं । इनका विवरण इस प्रकार है —

प्रान्त	सामान्य	मुसलमान	बौद्ध	जोड़
काश्मीर	३	४१	—	४४
जम्मू	२१	८	—	२९
लद्दाख	—	१	१	२
कुल जोड़ . .	२४	५०	१	७५

"ये आंकड़े स्पष्ट रूप में यह बताते हैं कि शेख अब्दुल्ला की मुस्लिम हुकूमत को जम्मू और लद्दाख के हिन्दुओं और बौद्धों पर लादा नहीं जा सकता और न ही लादा परिषद्, जम्मू के जाना चाहिये ।   "

("जम्मू और काश्मीर राज्य के लिए एक पृथक संविधान को जम्मू रद्द करता है" शीर्षक पुस्तिका के पृष्ठ १२ से, जिसको अखिल जम्मू और काश्मीर प्रजा परिषद् जम्मू ने प्रचार मन्त्री ने जारी किया ।)

आपने वर्तमान आन्दोलन में मुसलमानों के भाग लेने की बात कही है । मुझे आश्चर्य होता है कि प्रजा परिषद् के ऐसे निश्चित साम्प्रदायिक विचारों और मुसलमानों के साथ किये गये उसके पहले व्यवहार को देख कर क्या कोई भी बुद्धिमान मुसलमान वर्तमान आन्दोलन में सहयोग देने पर गम्भीरता से विचार भी कर सकता है ? उलटे सरकार को इस प्रकार के प्रार्थना-पत्र मिले हैं कि गड़बड़ी के क्षेत्रों में परिषद् के आतंकवाद से मुसलमानों की रक्षा की जाये ।

अब मैं प्रजा-परिषद् की तथाकथित न्याय-संगत मांगों के सवाल को लेता हूं । आप कहते हैं कि जम्मू के लोग जम्मू के भविष्य की अनिश्चितता और अरक्षा की भावना से पीड़ित हैं । लेकिन यह अनिश्चितता अकेले जम्मू तक ही सीमित नहीं है । काश्मीर और लद्दाख के लोग भी इसका अनुभव कर रहे हैं । पर इसको दूर करने का मार्ग क्या है ? मेरे या मेरी सरकार के वश में तो उस झगड़े का फैसला करना नहीं है जो कि संयुक्त राष्ट्र संघ के हाथों में है । हम सभी इस

बात के लिये अत्यधिक उत्सुक हूँ कि एक सन्तोषजनक हल निकल आये। पर प्रजा-परिषद् ने तो इस ढग मे अपनी मागे रखी है जैसे कि मै ही समस्या के हल के रास्ते मे रोडे अटकाता हू।

मै यहा कह दू कि काश्मीर समस्या के समाधान के बारे मे भारत के विभिन्न राजनीतिक दलो मे एक बुनियादी मतभेद है। आप काश्मीर समस्या को एक राष्ट्रीय प्रश्न बताते है। इससे भारत के विभिन्न दलो के दृष्टिकोणो मे एकता का आभास मिलता है। लेकिन दुर्भाग्यवश इस राज्य की स्थिति के बारे मे बडी ही गलत और परस्पर विरोधी आलोचनाये की गई है। लक्ष्यो के बारे मे ही विरोध नही रहा है, बल्कि उनको प्राप्त करने के प्रस्तावित साधनो के विषय मे भी बडा मतभेद है। यह बात प्रश्न को राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय दोनो दृष्टियो से अधेरे मे डाल देती है।

प्रत्येक भारतीय का यह नैतिक अधिकार है कि वह काश्मीर समस्या को समझे। पर जब उसे गलत रूप मे समझा जाता है तब निर्णय उलझता है। मै समझता हू कि जन सघ को अकाली नेता मास्टर तारा सिह का सहयोग मिल गया है। मास्टर जी काश्मीर के बारे मे क्या कहते है यह जानना दिलचस्प है। अपने लखनऊ के भाषण मे उन्होने कहा बताया जाता है :—

> "काश्मीर पाकिस्तान का था। यह एक मुसलमानी राज्य है। लेकिन मै इसे उस सम्पत्ति की एवज मे मागता हू जोकि शरणार्थी पश्चिमी पाकिस्तान मे छोड आये है।"

उनके पास समस्या का एक हल भी है। वे कहते है कि "काश्मीर के मुसलमानो को पाकिस्तान भेज देना चाहिये। वही देश वास्तव मे उनका है।"

मै इस बुद्धिमानी और इस राजनीति के बारे मे क्या कहू ?

फिर हिन्दू महासभा के प्रधान श्री एन० सी० चटर्जी ने भोपाल मे अध्यक्ष पद से दिये गये अपने भाषण मे सविधान को हिन्दू आदर्शो के अनुसार बदलने की आवश्यकता पर ज़ोर देते हुये काश्मीर के बारे मे कहा था कि हिन्दू महासभा इस बात के लिये सघर्ष करेगी :—

> "काश्मीर समस्या को सयुक्त राष्ट्र सघ से वापस ले लिया जाय, जम्मू और काश्मीर राज्य को पूरी तरह भारत मे मिला लिया जाय और वह भारतीय सविधान को स्वीकार कर ले।"

जन सघ के भी राज्य के भविष्य के बारे मे अपने विचार है और समय समय पर आपने उन को व्यक्त किया है। एक प्रेस सम्मेलन मे हाल ही मे आपने यह कहा बताया जाता है :—

> "यदि काश्मीर घाटी के लोग कुछ अलग सोचते है तो कम से कम इस प्रदेश के लोगों के लिये तो इस बीच कोई खास कदम उठाया ही जाना चाहिये। हम इस बात के लिये बिल्कुल तैयार है कि शेख अब्दुल्ला के प्रधानत्व मे घाटी, जितने समय तक के लिये उसका जी चाहे और जो भी चाहे, कदम उठाये, पर जम्मू और लद्दाख को तो इस बीच प्रजा की इच्छा के अनुसार भारत मे पूरी तरह मिला ही लिया जाना चाहिये। मै इस बात को दुबारा कह दू कि मै

> जम्मू और काश्मीर के टुकडे नही चाहता। लेकिन शेख अब्दुल्ला हठ करते है तो जम्मू और लद्दाख का तो बलिदान कम से कम नही होना चाहिये। घाटी भारत सघ के अन्तर्गत एक अलग राज्य बन सकती है और इसको सभी प्रकार की राजकीय सहायता दी जा सकती है। तब सविधान की दृष्टि से जैसा शेख अब्दुल्ला और उनके सलाहकार चाहे, किया जा सकता है।"

इस प्रकार की बुनियादी तौर से असगत बातो को दृष्टि मे रखते हुये मेरी समझ मे नही आता कि काश्मीर समस्या पर एक राष्ट्रीय समस्या के रूप मे कैसे विचार किया जा रहा है ? समाधानो मे एकता नही है और इसीलिये मै यह नही समझ पाता कि कौन से दृष्टिकोण को संगत अथवा प्रतिनिधि माना जाये ? विचारो का यह मतभेद स्पष्ट है। इसका यहा जिक्र मैने इसी लिये किया क्योकि आपने "प्रजा परिषद् की न्यायसगत या उचित मागो" की बात कही है और यह भी बताया है कि यह सस्था इन मागो को पूरा कराने के लिये मेरे और श्री नेहरू के विरुद्ध सघर्ष कर रही है।

जम्मू के हिन्दुओ मे सुरक्षा की भावना लाने के लिये आप कहते है कि राज्य की सविधान सभा एक प्रस्ताव पास करे जिसके अनुसार राज्य को भारत मे मिला दिया जाये। साथ ही आप यह भी महसूस करते है कि सभा जम्मू के लोगो का प्रतिनिधित्व नही करती। मेरी समझ मे नही आता कि भारत-प्रवेश का निर्णय करते ही यह सभा प्रतिनिधि कैसे बन जायेगी ? लेकिन इस बात को भी छोडिये। इस पर भी विचार किया जाना चाहिये कि जब झगडा सयुक्त राष्ट्र सघ के हाथो मे पडा है, तब इस प्रकार के प्रवेश से भारत को या राज्य को क्या लाभ होगा ? हम ऐसा प्रस्ताव पास करने को तैयार है, पर बदले मे ऐसे निर्णय के फलस्वरूप आ पडने वाले सभी उत्तरदायित्वो को निभाने के लिये भारत सरकार को तैयार होना चाहिये। आप यह बात माने कि यदि भारत सरकार सविधान सभा के निर्णय को सर्वोच्च घोषित कर दे तो फल यह होगा कि यह निर्णय सयुक्त राष्ट्र सघ की इच्छा के विरुद्ध हो जायगा। भारत इस स्थिति मे नही है कि मामले को वापस ले लेवे। भारत के लिये तब यही इलाज रह जायेगा कि वह उक्त सस्था का त्याग कर दे और उसके अन्य सदस्यो के विरोध को झेले। प्रश्न यह है कि क्या भारत अलग हो सकता है ? विशेष कर जब कि सभी विदेशी शक्तियो की सहानुभूति पाकिस्तान की ओर हो जायेगी ? अकेले पडने की इस स्थिति मे सशस्त्र झगडा हुये बिना नही रह सकता।

यदि भारत सरकार सविधान सभा के निर्णय को कायम रखने के लिये इतनी दूर तक जाने को तैयार हो तो निर्णय बिना अधिक देरी के तत्काल किया जा सकता है। लेकिन यदि ऐसा नही किया जा सकता तो क्या मै पूछ सकता हू कि सभा को एक ऐसा प्रस्ताव स्वीकार करने से क्या लाभ ? जिसके बाद भी राज्य का राजनीतिक भविष्य अनिश्चित रहे ? केवल औपचारिकता मात्र से उन लोगो को सन्तोष नही हो सकता जो मामले का एक स्थायी हल निकालना चाहते है।

ऊपर कही गई बात के अतिरिक्त आपका यह प्रस्ताव कि सविधान सभा के माध्यम से राज्य के पूर्ण प्रवेश के प्रश्न को अन्तिम रूप से तय किया जाय, स्पष्टतः समस्या का पीछे की

और से हल प्रतीत होता है। हम ऐसा प्रस्ताव इसी लिये रखते है क्योकि एक निष्पक्ष जनमत की अभी सम्भावनाएं नही है। पर मेरे मन मे ज़रा भी सन्देह नही कि यदि अनुकूल अवस्था आए और जनता की इच्छा जानने के लिये आवश्यक वातावरण बनाया जाये तो भी निर्णय निश्चय ही हमारे हक मे होगा।

आपसे शायद यह छिपा नही है कि पाकिस्तान और दूसरे स्वार्थी पक्ष राज्य की एकता को नष्ट करके उस पर एक निर्णय लादने का प्रयत्न कर रहे है। यदि हम उनकी हिसात्मक कार्रवाइयो के विरुद्ध खड़े रह सके है तो इसका ठीक-ठीक कारण यही है कि हम एकता की आवश्यकता पर जोर डाल कर राज्य की दृढता को बनाये रखने के लिये उत्सुक है। यदि एक बार भी राज्य के लोगो मे फूट पड़ जाय, तो कोई भी निर्णय उन पर लादा जा सकता है। पर आप स्पष्ट रूप मे इस बात को महसूस नही करते कि इस एकता को कैसे प्राप्त किया जाय। यह मानते हुये भी कि राज्य का सन्तुलन बना रहना चाहिये, आप प्रजा परिषद् की मागो को पूरा कराने पर जोर देते है और चाहते है कि जम्मू को पूरी तरह भारत मे मिला दिया जाय, शेष राज्य का चाहे जो हो। आपका यह भी विश्वास है कि इस मार्ग के अपनाने से पाकिस्तान अन्त मे अपनी माग को त्याग देने के लिये मजबूर हो जायेगा। मेरी समझ मे नही आता कि यह जीत कैसे मिल सकती है ? हम इस बात को भुला नही सकते कि परिषद् की हलचले, जिनको आप सगत बताते है, राज्य की एकता एव दृढता के लिये भयावह सिद्ध हो रही है। आप से यह छिपा न होगा कि इस आन्दोलन की काश्मीर मे क्या प्रतिक्रिया हो सकती है जब कि यह आन्दोलन हिन्दुओ के नेताओ द्वारा सामरिक ढंग पर चलाया जा रहा है और मुसलमानो के प्रति इनका रुख अतीत मे ही स्पष्ट हो चुका है। (अगर आन्दोलन आगे बढता है तो गडबडी पैदा हो सकती है जो राज्य की बुनियाद को हिला कर रख देगी।) मै अपने को यह नही समझा सकता कि आप तोड-फोड और अराजकता के द्वारा काश्मीर समस्या का हल निकालना चाहते है।

मै नही समझ पाता कि वर्तमान वैधानिक स्थिति मे पूर्ण प्रवेश की माग को कैसे पूरा किया जा सकता है। और किसी से भी अधिक आप इस स्थिति से भली प्रकार परिचित है। जो कुछ भी यहा सरकार ने किया है वह पूरी तरह भारतीय सविधान के अनुसार है। और फिर भी आप स्थिति को इस प्रकार रखते है जिसका मतलब होता है कि हम सविधान की उपेक्षा करते रहे है। मुझे यह देख कर कष्ट होता है कि आपके स्तर का एक व्यक्ति भी "एक प्रधान, एक विधान, एक निशान" जैसे भावुकतापूर्ण नारो मे बह कैसे सकता है ? आपका शायद यह विचार है कि हम इन प्रतीको का विरोध करते है। राज्य के भारत में मिल जाने और इसका भारत से वैधानिक सम्बन्ध हो जाने से ये प्रतीक इस राज्य मे भी उतने ही सर्वोच्च है जितने किसी और राज्य में। यदि राज्य सरकार की नीतियो में कही अन्तर पडा है तो संक्षेप में इसलिये कि भारतीय सविधान ने ऐसा अधिकार राज्य को विशेष तौर से दिया है। यह निर्णय अभी नही, बल्कि सन् १९४९ मे हुआ था जब कि आप भी भारत सरकार के अग थे।

ऐसा लगता है कि आप वैधानिक स्थिति की इन उलझनो को स्वीकार नही करते । हमने एक विज्ञप्ति प्रकाशित की जिसकी एक प्रति मै इस पत्र के साथ भेज रहा हू । मै आशा करता हू कि आप समस्या के इस पक्ष पर ध्यान देगे और सविधान के द्वारा निर्धारित राज्य सरकार के अधिकारो एव उत्तरदायित्वो पर निष्पक्ष रूप से विचार कर सकेगे । इस स्थिति मे कोई कचाई नही है । सविधान की विशिष्ट धाराओ के आधार पर ही राज्य और भारत का सम्बन्ध मजबूती से टिका है । वैधानिक पक्ष की बाते करते हुये यह कभी-कभी आसानी से भुला दिया जाता है कि प्रजा परिषद सविधान मे से धारा ३७० को निकाल देना चाहती है । जहा तक हमारा सम्बन्ध है, हमारा विश्वास है कि राज्य को जो एक खास स्थिति दी गई है वही इस राज्य और भारत के बीच एकता को बढा सकती है और उनके सम्बन्धो को दृढतर कर सकती है । भारत की विधान परिषद् ने राज्य की खास परिस्थितियो को समझा था और उपयुक्त सविधान तैयार किया था । पर यदि सम्बन्धो की इस बुनियाद को बदला जाता है तो निश्चय ही कुछ परिणाम निकलेगे जिनके लिये हमे तैयार रहना चाहिये ।

इस बारे मे यह कहना उचित होगा कि जो दल आजकल प्रजा परिषद् की सहायता कर रहे है वे भारतीय सविधान के वर्तमान रूप से सन्तुष्ट नही है । कुछ ने इस बात की खुली माग की है कि यह हिन्दू आदर्शो के अनुसार बनना चाहिये । दूसरे दल भी अपने-अपने झडो के बारे मे समान रूप से उत्सुक रहे है । ऐसे ही एक वक्ता ने हाल ही मे कहा था कि मेरा दल राष्ट्रीय झडे के स्थान पर भगवा ध्वज लाने के लिये सघर्ष करेगा । ये सब दल और तत्व प्रजा परिषद् के "एक विधान, एक प्रधान, एक निशान" के आन्दोलन की पीठ पर है । इस प्रकार के तरीको से कुछ लोगो को कुछ समय के लिये भले ही भलाया जा सके, पर इसमे कोई भी शक नही कि प्रजा परिषद् के इन सहयोगियो की सविधान और उसके प्रतीको के प्रति भक्ति सदेह से खाली नही है ।

आपने समझौतो का जिक्र किया है और शिकायत की है कि उनको लागू करने मे देर हुई । इसको साफ करना जरूरी है । आप प्रजा परिषद् की सारे राज्य को अथवा उसके भाग को पूरी तरह भारत मे मिला देने की माग का समर्थन करते है । इस दशा मे वर्तमान समझौतो की कोई बातचीत नही हो सकती क्योकि यह समझौते तो सविधान द्वारा राज्य को मिली विशिष्ट स्थिति को ही पूरी तरह पुष्ट करते है । प्रजा परिषद् सदा इसका विरोध करती रही है और वर्तमान आन्दोलन राज्य की इस विशिष्ट स्थिति को खत्म करने के लिये ही चलाया जा रहा है । मै नहीं जानता कि इस विरोध का क्या करू ?

जहां तक हमारा सम्बन्ध है, हमने इन समझौतो को लागू करने का वचन दिया है और सभी निर्णय निश्चय ही लागू किये जाएं । पर आपने शायद इस बात का विचार नही किया है कि इन में से एक निर्णय यानी सदरे रियासत का चुनाव, हम कठिनाई से ही लागू कर पाये थे कि प्रजा परिषद् ने इस निर्णय के विरुद्ध, जो कि समझौते का एक

अग था, आन्दोलन आरम्भ कर दिया। प्रजा परिषद् ने यह स्पष्ट रूप से कहा है कि वह समझौते के विरुद्ध है। और आपने भी इस विचार की अपने भाषणो में पुष्टि की है।

मैं नही कह सकता कि इस विरोध के होने पर भी समझौतो के लागू करने मे देर होने की शिकायत करना ठीक है। समस्या एकदम सरल है। यदि प्रजा परिषद् समझौतो को जल्दी से जल्दी लागू कराना चाहती है तो उसे जो कुछ सविधान ने स्वीकार किया है, अर्थात् भारत सघ में राज्य की विशिष्ट स्थिति को, मानना पडेगा। यदि यह नही माना जाता तो इसका साफ मतलब यह है कि समझौता भी मान्य नही है और जम्मू और काश्मीर राज्य की विशिष्ट स्थिति को खत्म करने के लिये भारतीय सविधान मे सशोधन किया जाना चाहिये। मैं चाहता हू कि ये दो बाते आपस मे गडबडाई न जाये।

क्योंकि आप ने समझौतो का जिक्र किया है, इस लिये क्या मैं कह सकता हू कि हमारी तरफ़ से उनको लागू करने में कोई देर नही हुई है? समझौते गत वर्ष जुलाई में हुए थे। अगस्त के आरम्भ मे ससद् के दोनो सदनो ने उन को स्वीकार किया। ११ अगस्त को राज्य की सविधान सभा ने उनको स्वीकार किया और तत्काल बाद ही सदरे रियासत के चुनाव का मामला भारत सरकार के साथ उठाया गया जिसमें सविधान में आवश्यक व्यवस्थापन किया जा सके। इस मे एक लम्बा समय लग गया क्योकि भारत सरकार के वैधानिक विशेषज्ञो ने इस को क्रियान्वित करने के तरीकों की पूरी छान-बीन की और बात १६ नवम्बर तक टल गयी थी १७ नवम्बर को ही राज्य की सविधान सभा सदरे रियासत का चुनाव कर सकी। सदरे रियासत २२ नवम्बर को जम्मू कठिनाई मे ही पहुच पाये थे कि प्रजा परिषद् ने उनका काले झण्डो से स्वागत करके आन्दोलन शुरू कर दिया। निश्चय ही यह आशा नही की जा सकती थी कि हम ऐसी अजीब परिस्थिति मे सविधान बनाने बैठते।

मैं चाहता हू कि आप इस स्थिति को समझें। मैं पूछना हू कि क्या ऐसे नाजुक मामले दबाव या धमकियो से हल हो सकते है? समझौतो के अनुसार निर्णय करने मे देरी का होना अथवा न होना झगडे का कारण नही है, इस सम्बन्ध मे मेरे मन मे जरा भी सन्देह नही है। सघर्ष का कारण बुनियादी है, और जैसा कि आप ने माना है, वह उस अनिश्चितता में निहित है जिस मे राज्य का भविष्य आज झूल रहा है। हम भारत से सम्बन्ध जोडने के लिये एक साथ आगे बढ़े और आधारभूत सिद्धान्तो पर स्थिर रहते हुए यह सम्बन्ध हमे पूरी तरह स्वीकार है। पर दुर्भाग्यवश प्रजा-परिषद् जम्मू के हिन्दुओ के लिये अधबीच मे ही एक निर्णय चाहती है। एक भय, जिसके कारण कुछ लोग, शीघ्र निर्णय की इच्छा करते है, समझ मे आता है पर इस निर्णय को प्राप्त करने का उनका तरीका ऐसा है जो गम्भीर परिणामो से भरा है। मैं नही समझता कि उन लोगो के द्वारा हम पर राज्य के टुकडे कर देने की तोहमत लगाई जानी चाहिये जो कि स्वय राज्य को साम्प्रदायिक आधार पर बाट देना चाहते है। प्रजा परिषद् के नेताओ ने यह साफ कर दिया है कि वे तब तक सुख की सास नही लेगे जब तक वे काश्मीरियो पर मुस्लिम आधिपत्य के तथाकथित भीषण भय से जम्मू के हिन्दुओ को मुक्त नही कर लेते। इस रुख का मैं क्या उत्तर दे सकता हू?

दो महीने बीत गये। जब से सरकार जम्मू आई है इस को बराबर अपने शासन के विरुद्ध गम्भीर एव दृढ़ चुनौतियों का, जिनका लक्ष्य कि शासन-व्यवस्था को खत्म कर देना है, सामना करना पड़ा है। इन का परिणाम हुआ है हिंसा और अव्यवस्था की खुली कार्रवाइया। जनता की सहायक सेवाओं को भी नही छोड़ा गया है। सरकारी कर्मचारियो पर आक्रमण हुआ है और उन को दिन दहाड़े धमकाया गया है। इस गड़बड़ी और आतक के परिणाम का अनुमान भली भाति किया जा सकता है। सरकार के मामूली काम-काज को भी एक दम कठिन बना दिया गया है। व्यापार और उद्योग को गहरा धक्का लगा है। समाज विरोधी और भ्रष्ट तत्व इस आन्दोलन की ओर अधिकाधिक खिच रहे है।

गम्भीर कठिनाइयो के होते हुए भी सरकार ने बड़ी ज़ब्त और धैर्य से काम लिया है। कोई भी सरकार, जिस पर शासन का उत्तरदायित्व है, अपने कर्मचारियो, सरकारी सस्थाओ और सम्पत्ति की पूरी रक्षा किये बिना ठीक तरह नही चल सकती। या तो हमे शान्ति और व्यवस्था कायम करने के लिये उचित कार्रवाई करनी थी अथवा गड़बड़ी फैलाने वाले लोगो के हाथो मे अपने को सौप देना था। फिर भी पूरी अनिच्छा के साथ ही अधिकारियो को उन हालतो मे बल प्रयोग करना पड़ा जब कि स्थिति को वश मे लाने के और सभी उपाय असफल हो चुके थे। निरपक्ष रूप से जाच करने वालो ने यह कहा है कि अधिकारियो का व्यवहार कही भी अतिशय अथवा बढ़ कर नही हुआ है। छब मे हुई घटनाओ की कानूनी छान-बीन ने, जो कि राज्य के उच्च न्यायाधीश श्री ब्रज नन्दन लाल ने की थी, अधिकारियो के द्वारा स्थिति को काबू मे करने के लिये काम मे लाये गये तरीको को न्यायसगत ठहराया है। अपनी खोज मे उन्हो ने कहा है

> "पुलिस दल प्रदर्शन करने वालो से सख्या मे बहुत कम था और तहसीलदार मजिस्ट्रेट ने जान और माल का आसन्न खतरा देख कर गोली चलाने की आज्ञा दे दी। ऐसी परिस्थितियो मे मै समझता हू कि अव्यवस्थित भीड को बिखराने के लिये गोली चलाना यथेष्ट रूप से उचित था। जान और माल को साफ खतरा था। यह देखते हुए अपने बचाव के लिये गोली चलाया जाना न्याय सगत भी था।"

आप जम्मू की परिस्थिति के बारे मे इस प्रकार लिखते है जैसे कि प्रजा परिषद का आन्दोलन सरकार के अत्याचार का परिणाम है। मै आप को विश्वास दिलाता हू कि हम ने कभी भी जनता के आन्दोलनो के प्रति दमन नीति अपनाने मे विश्वास नही किया। पर इस बात की उपेक्षा नही की जानी चाहिये कि जम्मू का यह आन्दोलन उन समस्याओ से ज़रा भी तो सम्बन्ध नही रखता जो कि साधारण लोगो के जीवन से मतलब रखती है। प्रजा परिषद हिंसा का हथियार हाथ मे लेकर एक नियमित शासन व्यवस्था को उलटने का प्रयत्न कर रही है। अधिकारियो की ओर से कोई भी ढील-ढाल अराजकता की स्थिति उत्पन्न कर देगी।

आप ने जम्मू के लोगो की कुछ शिकायतो का जिक्र किया है और उनके प्रति भेदभाव के व्यवहार के आरोप हम पर लगाये है। यदि आप ऐसे सब मामलो की चर्चा मुझ से करते तो मै उन का स्वागत करता। इस से मुझे अपने अधिकारियो की गलतियो को जानने का अवसर मिलता। मै नही कहता कि हमारा शासन पूर्ण है, पर यदि गलतिया हमे बताई जाय तो हमे

उन को दूर करने में प्रसन्नता ही होगी। हम में से कोई भी झूठे आत्म-सम्मान की भावना को आश्रय नहीं देता।

पर मैंने इस पक्ष पर अच्छी प्रकार विचार किया है। इस बात को जानने के लिये एक पूरी छान-बीन की गई कि जम्मू के लोगों के विरुद्ध क्या कोई भेद-भाव की नीति कभी अपनाई गई है ? मैं उस पुस्तिका की प्रति भी आप को भेज रहा हूं जो हमने इस असर को दूर करने के लिये प्रकाशित की है। मैं आशा करता हूं कि आप को इसके पढ़ने से लाभ ही होगा। वास्तव में यदि कोई भेद-भाव किया भी गया है तो वह जम्मू के लोगों के हक में ही किया गया है, उनके विरुद्ध नहीं।

साथ ही, आप उस काम की अधिकता का भी अनुमान शायद कर सकेंगे जो हमें करना पड़ा है। हमें युद्ध की स्थितियों, शरणार्थियों को बसाने, बाढ़, अकाल, और दूसरी कितनी ही भयंकर समस्याओं का सामना करना पड़ा है। सन् १९४७ के विनाश के बाद सब से बड़ी आवश्यकता राज्य को दृढ़ बनाने की थी। हमें अपने सारे नगण्य साधन इसी ओर लगाने पड़े। भारत की जनता और सरकार ने जो सहायता हमें दी है, वह इस प्रयास में हमारे लिये बहुत बड़ी शक्ति बनी है। H 86/K19N

इन बड़े-बड़े कामों के होते हुए भी हम इस बात से इंकार नहीं करते कि जम्मू में और कई दूसरे स्थानों पर बहुत सी ऐसी समस्यायें हैं जिन की ओर हमारा ध्यान जाना चाहिये। सरकार उनका हल निकालने के लिये उत्सुक है। जब भी अवसर मिलता है वह आवश्यक कार्रवाई स्वयं ही करती है। जैसा कि आप ने सुना होगा, अभी हाल ही में एक समिति उच्च न्यायाधीश श्री जानकी नाथ वज़ीर की अध्यक्षता में बनाई गई है जो उन उपायों के प्रयोग पर रिपोर्ट देगी जिन को कि सरकार ने पिछले पांच सालों में लागू किया है। यदि समिति कहेगी कि इन में दोष और भूलें हैं तो उनको दूर करने के लिये आवश्यक कदम उठाये जायेंगे। सरकार जनता के हित चिन्तकों की ओर से क्रियात्मक सुझाव, उन की सहायता और सहयोग चाहती है। हम इस बात के लिये उत्सुक हैं कि हमें उन सभी उपायों को लागू करने के लिये, जिन को कि सरकार आम जनता की भलाई के लिये हाथ में लेती है, सब की अधिक से अधिक सद्भावना मिले।

GH 88.

सीमा प्रान्त का जो जिक्र आप ने अपने पत्र में किया उस को मैं ने पढ़ा है। एक आम जनमत के विषय में आप का भय, उस प्रान्त के भयानक भविष्य पर ही आधारित है। मुझे यह कहना पड़ता है कि ऐसा निर्देश करना उस महान आन्दोलन के प्रति उचित न्याय न होगा जो कि गांधी जी की प्रेरणा से खान अब्दुल गफ्फार खां ने चलाया। अब तो सभी जान गये हैं कि सीमा प्रान्त में हुए जनमत के भयानक परिणाम प्रान्त में राष्ट्रीय आन्दोलन की किसी कमज़ोरी के कारण नहीं हुए, बल्कि परिस्थितियों ने ही उसे पाकिस्तान की ओर धकेल दिया। पहले तो सीमा प्रान्त शेष भारत से बिल्कुल अलग कट गया और तब उस अभागे प्रान्त से भारत और पाकिस्तान के बीच एक को चुन लेने को कहा गया। स्पष्ट ही भारत के पक्ष में चुनाव का सफल होना असम्भव था। इन भयंकर परिस्थितियों के होते हुए भी पाकिस्तान ने जनमत को बहुत मामूली बहुमत से जीता।

जहा तक जनमत और काश्मीर राज्य के लोगों का सम्बन्ध है, उन्हों ने भारत के विभाजन से बहुत पहले ही असाम्प्रदायिक आदर्श को अपनाया। उन्हों ने पाकिस्तानी नेताओं के आक्रमणों का, उनके द्वारा दिये गये प्रलोभनों का, दबावों का और अन्त में १९४७ में उन की हिंसात्मक कार्यवाइयों का सफलता से मुकाबला किया। जब पाकिस्तानी आक्रमणकारी श्रीनगर के दरवाजे पर आ पहुंचे थे तब काश्मीर के मुसलमानों ने असाम्प्रदायिकता और विश्व-बन्धुत्व के अपने सिद्धान्तों की रक्षा के लिये अपने बहादुर बेटों को बलिदान के लिये भेजा था। यह उस समय किया था जब कोई भी सहायता देने वाला नहीं था। चारों ओर अंधेरा था और उन के सहधर्मी प्रजा परिषद के उन नेताओं के हाथों बुरी तरह काटे जा रहे थे जो कि आज भारत के असाम्प्रदायिक आदर्शों के प्रति भक्ति दिखाते है। तभी से भारत और काश्मीर के बीच एक सम्बन्ध पक्का होता गया। भारत के बहादुर बेटों ने जाति, धर्म अथवा रंग की चिन्ता न करते हुए भारत और काश्मीर की जनता के समान आदर्शों की रक्षा के लिये अपना खून बहाया। भारत में हमारे लाखों भाइयों और बहनों ने काश्मीर के अपने पीड़ित भाइयों की सहायता की। ऐसा शक करना कि अब काश्मीर के मुसलमान अपने असाम्प्रदायिक आदर्शों को छोड़ देंगे, अच्छा नहीं लगता, यद्यपि भारत के साम्प्रदायिक दलों के नेताओं के भाषण और उनकी घोषणाये तथा जम्मू की प्रजा परिषद के नेताओं को समय समय पर वे जो प्रेरणाये और नेतृत्व करते रहे है, यह सब निस्सन्देह एक गहरा धक्का उन को पहुचाता है। लेकिन मैं आप को और भारत की जनता को यह विश्वास दिला दूं कि यदि असाम्प्रदायिकता और मानवीय भाई-चारे के लिये चलने वाली इस बड़ी लड़ाई में काश्मीर के मुसलमान अकेले भी छूट गये तब भी वे अपने आदर्शों से डिगेंगे नहीं।

आपका हितेच्छु,
(ह०) एम० एम० अब्दुल्ला

डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी, संसद सदस्य
७७, आशुतोष मुकर्जी रोड,
कलकत्ता-२५

शेख साहब का उत्तर

जम्मू तवी,
५ फरवरी, १९५३

प्रिय डाक्टर साहब,

मुझे आपका कलकत्ते से आया ३ फरवरी का पत्र, जिस के साथ आपने श्री नेहरू को अपने जवाब की एक प्रति भी भेजी थी, मिला।

आपका पहला पत्र मुझे दिल्ली से लौटने पर २५ जनवरी को ही मिल सका था। इसी लिये उत्तर देने में देर हो गई। मैं इस पत्र का खुलासा जवाब आप को भेज चुका हूं जो आपको अब तक मिल चुका होगा। जो भी बाते आपने श्री नेहरू को लिखी, विशेषकर पहले पत्र में और अब अपने जवाब में, मेरा जवाब उन सब का उत्तर देता है।

जम्मू के लोगो की शिकायतो का जिक्र करते हुए आपने कहा है कि सीमा के जिलो का साम्प्रदायिक आधार पर बटवारा किया गया और इस की तत्काल छानबीन की जानी चाहिये। इस सम्बन्ध में हमारे सूचना मन्त्रालय ने जो एक नक्शा तैयार किया है वह आप को भेज रहा हू। मै आशा करता हू कि आप इसका अध्ययन करेंगे और सन्तुष्ट होंगे कि जिलो के दुबारा बटवारे में कुछ भी साम्प्रदायिक नही है।

मै कुछ और पुस्तिकाये भी आप की सेवा मे भेज रहा हू जो समय-समय पर जम्मू और काश्मीर सरकार पर लगाये गये आरोपो का उत्तर देती है।

आपका हितेच्छु,
(ह०) एम० एम० अब्दुल्ला

डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी,
संसद् सदस्य,
अध्यक्ष, भारतीय जनसंघ,
३०, तुगलक क्रेसेंट,
नई दिल्ली

डाक्टर मुकर्जी का पत्र

३०, तुगलक क्रेसेंट,
नई दिल्ली
१३ फरवरी, १९५३

प्रिय शेख साहब,

मुझे आपके ४ और ५ फरवरी के पत्र कुछ दिन हुए मिले। इस बीच मैंने श्री नेहरू से आगे पत्र-व्यवहार किया जिस की प्रतियां साथ मे नत्थी है। मैं आप को धन्यवाद देता हू कि आपने विस्तार के साथ खुले ढग से अपने दृष्टिकोण को रखा है। जो विभिन्न पुस्तिकायें आपने मुझे भेजी थी उन को भी मैंने देखा है और उन बातो को समझने की कोशिश की है जिन पर आपकी ओर से उन मे प्रकाश डाला गया है।

कुछ महीने हुए, मेरी आप से श्रीनगर मे होने वाली बातचीत का जिक्र आप ने किया है। यद्यपि मै कुछ बुनियादी समस्याओ के हल के सम्बन्ध मे आप से सहमत नही हूं, पर मै ने आपके दृष्टिकोण को और आपके रास्ते मे आने वाली कठिनाइयो को समझने का प्रयत्न किया है। यदि हम एक दूसरे के उद्देश्यो के प्रति शक करने लगे और बहस को आपसी गाली-गलौज और आक्षेप-आरोप में बदल दें तो हम किसी हल की आशा नही कर सकते। इस दृष्टि से मैं आपके हाल ही मे हुए कुछ भाषणो को, जिन मे कि आपने अपने आलोचको को देशद्रोही और देश के शत्रु कह कर पुकारा है, सगत नही कह सकता।

एक बुनियादी बात, जिस पर मै आपसे मतभेद रखता हूं, आपका प्रजा परिषद के प्रति दृष्टिकोण है। आप को याद होगा कि जब मै आप से श्रीनगर मे मिला था तो मैंने प्रार्थना की थी कि आप जम्मू के लोगो की भावनाओ की गहराई को समझे और लोगो के मन से भय और सन्देह को दूर करने के लिये कदम उठाये। मै ने आपको सलाह दी थी कि आप प्रजा परिषद के प्रति असहयोग का रुख न ले और बीच की इस खाई को और न बढने दें। आप ने दो कारणो से इस बात को मानने से इन्कार कर दिया था। पहला यह कि परिषद के पीछे काफी अनुयायी नही है और दूसरा यह कि इस सस्था का अतीत इतना कलंकित है कि आप उसके नेताओ से कोई सहयोग नही कर सकते। जहा तक पहले कारण का सम्बन्ध है, वह गलत सिद्ध हो चुका है। परिषद ने जो आन्दोलन चलाया और जिस प्रकार वह फैल रहा है, वह इस बात को सिद्ध करता है कि उस के पीछे बहुत बडी जनशक्ति है। कुछ भी हो, वह जनता के विभिन्न वर्गों को अपने साथ ले चलने में सफल हुई है और इन्ही के बारे मे आपका विचार था कि ये कभी भी इस सस्था का साथ नही दे सकते। एक प्रजातान्त्रिक नेता के रूप में आपको अपने विरोधियों की शक्ति और उन के प्रभाव को स्वीकार करना चाहिये। दूसरे कारण को लेकर आपने परिषद की पहली तथाकथित कार्रवाहियो के कारण उस से बात करने से इन्कार कर दिया है। इसे ठीक नही कहा जा सकता।

इतिहास मे ऐसे बहुत से उदाहरण है जब इस प्रकार के रुख से विनाशक नतीजे निकले है। भारत में अथवा जम्मू और काश्मीर राज्य में ही क्या बीती, इस को हम याद करे। क्या ब्रिटिश सरकार अपने इस निश्चय पर दृढ रह सकी कि वह ब्रिटिश शासको के शासन को ठुकराने वाली कांग्रेस से कोई सम्बन्ध नही रखेगी ? क्या गांधी जी और दूसरों को अपने विचारों के विपरीत भी मिस्टर जिन्ना और दूसरे लोगो के साथ समझौता करने की कोशिश नही करनी पडी ? राष्ट्रीय प्रश्नो के प्रति इन लोगो का रूख देशभक्तिपूर्ण नही कहा जा सकता था। आपके अपने मामले मे क्या हुआ ? यद्यपि आपने महाराजा के विरुद्ध विद्रोह का झडा ऊचा किया, पर क्या आप दोनो एक राष्ट्रीय सकट के समय साथ मिल कर नही बैठे और राज्य और देश की भलाई के लिये आपने महाराजा को अपना पूरा सहयोग नही दिया ? अपने विरोधियो के साथ रहे पिछले सम्बन्धो की बुनियाद पर ही, गम्भीर राजनैतिक मामलो के प्रति अपना आज का रुख बनाना कोई अच्छी बात नही है। मै आपके अतीत के बारे मे बहुत नजदीक सेकुछ नहीं जानता। लेकिन मै ने कुछ कागज-पत्र देखे है। आप ने स्वय एक साम्प्रदायिक दल के नेता के रूप मे अपना जीवन आरम्भ किया। बडे-बडे ब्रिटिश अफसरों तक ने प्रकट रूप मे यह चाहा है कि आपका और आपके आन्दोलन का उपयोग एक हिन्दू महाराजा के शासन को खत्म करने के लिये किया जाय। फिर भी आपके आज के उद्देश्यो को अलीगढ के दिनो से आरम्भ होने वाले आपके अतीत की छानबीन की बुनियाद पर नापना एक बडी भद्दी बात होगी।

आप महाराजा के शासन के विरुद्ध अथवा दूसरे लोगो की आक्रामक हिन्दू भावनाओं के विरुद्ध कुछ भी कहे, पर यह सत्य है कि भारत के बहुत से भाग स्वतन्त्रता मिलने से ठीक पहले के महत्वपूर्ण समय मे साम्प्रदायिक क्रोध और विद्वेष की आग मे जल रहे थे और भाति-भाति की भीषण घटनाये सब कही घट रही थी। तब इन्ही महाराजा के शासन मे जम्मू और काश्मीर का राज्य इस प्रकार की भद्दी घटनाओं से मुक्त था। उस समय भी आपका राजनैतिक आन्दोलन बे रोक-टोक चल रहा था और आपका राज्य के प्रबन्ध में कोई योग नही था। हम इस पिछले इतिहास की छानबीन मे न पडें। सन् १९४६ और सन् १९४७ मे बहुत सी बाते ऐसी हुई जिनके लिये किसी दल अथवा सम्प्रदाय को उत्तरदायी नही ठहराया जा सकता। घटनाये हुई, उनकी प्रतिक्रिया हुई और हम एक भयकर जजाल मे पड गये। हमें उस अध्याय को भूल जाना है यद्यपि उस दुखान्त नाटक से मन मे एक शिक्षा अवश्य लेनी है जिस से भविष्य में गलतिया न हो सके। हमारी कोशिश यह होनी चाहिये कि हम किसी भी झगडे को सुलझाने के लिये उसके महत्व और उसकी अच्छाइयो-बुराइयो के आधार पर उसको समझे और एक समझौते पर पहुचने का प्रयत्न करे।

मै ने आप से इस बात को छुपाया नही है कि आपके और दूसरे लोगो के द्वारा जिस ढंग से भाषणो और वक्तव्यो में डोगरों पर आक्रमण किया गया है उसे देख कर मुझे अफसोस हुआ है। परिस्थितियो ने राज्य का भाग्य आपके हाथों में दे दिया और आप परिस्थितियों को ठीक समझ कर जम्मू और काश्मीर में रहने वाले सभी वर्गों के लोगों के मन में विश्वास उत्पन्न कर सकते थे। डोगरे सदियो से राज्य के शासक रहे है और आपके अधिकारारूढ होते ही परिस्थिति अचानक उल्टी हो गई। जिस ढग से आप ने गाली-गलौज के स्तर तक पहुंच कर महाराजा के

विषय में बहुत कुछ कहा उसे मैंने पसन्द नही किया। और जबकि एक समय आपने लिखित रूप मे उन्हे अपना पूरा सहयोग और पूरा साथ, यहा तक कि राजभक्ति तक, प्रदान करने का आश्वासन दिया था उस समय आप ने उन्ही के निर्णय के फलस्वरूप राजनीतिक शक्ति को प्राप्त किया था। आजकल की व्यवस्था मे वश-क्रम से चला आने वाला राज-पद ठीक बैठे अथवा न बैठे, लेकिन उस महाराजा के प्रति जो, अपने निर्णय के फलस्वरूप ही अपनी सत्ता खो बैठा एक आक्रामक रुख लेना बिल्कुल ही अनावश्यक था। लेकिन जब कभी भी यह रुख सीमाओ को तोड कर डोगरों पर आक्रमण के रूप में प्रकट होने लगा तब यह भयानक परिणामो का कारण बन गया। मैंने इस लिये आप से प्रार्थना की थी कि आप राज्य मे एक मनोवैज्ञानिक वातावरण पैदा करने के लिये हर सम्भव कदम उठाये जिस से जनता के सभी वर्ग आपको अपना ऐसा सर्वमान्य नेता माने जिस के हाथो मे लोग अपने हितो को सुरक्षित छोड सके। जब मै जम्मू मे था तब मैंने आपके शासन के विरुद्ध भावनाओं की गहराई को देखा था और यह भी देखा था कि किस प्रकार लोगो के भय और सन्देह दूर नही किये जाते। मैंने उस समय भी स्वीकार किया था, और आज भी मै खुले दिल से इस बात की प्रशसा करता हू कि आपने भयंकर कठिनाइयो के होते हुए भी पाकिस्तान बनाये जाने के आधारभूत सिद्धान्त को चुनौती दी थी। इस सम्बन्ध में एक बहुत बड़ा प्रयोग किया जा रहा था जिसको भारत के राष्ट्रीय नेता सफल न बना सके और उनकी कमज़ोर नीति ने देश के टुकडे करा दिये। मैंने इस महान कार्य के लिये आपको बधाई दी थी। पर मैंने अकेले मे आपको चेतावनी भी दी थी और जनता के बीच कहा भी था कि परिस्थिति का हल निकालते हुए अपने कामो से अथवा वचनो से आप पृथकता की भावनाओ को प्रोत्साहित न करे और जम्मू की अपनी खास समस्याओं की उपेक्षा न करे। मने जम्मू और श्रीनगर से लौट कर अपने विचार श्री नेहरू से कहे थे। यदि आप दोनो ने बात को सुलझाने के लिये पहल की होती तो यह सब कुछ घटित न होता।

वर्तमान गत्यवरोध को, जो कि सारे भारत की भलाई चाहने वाले किसी भी व्यक्ति के लिये अच्छा नही है, दूर करने की पहली शर्त यह है कि आप प्रतिष्ठा की मिथ्या भावना को त्याग दें और इतनी देर हो जाने पर भी प्रजा परिषद के नेताओ से सभी झगडो के बारे मे बातचीत करना स्वीकार कर ले। यदि आप ऐसा करते है तो आपको कमज़ोर पडने का दोषी कोई नही ठहरायेगा बल्कि सभी आपकी राजनीतिक कुशलता और वास्तविकता को समझने की दृढता की सराहना करेगे।

आपके पत्र मे कुछ कानूनी और वैधानिक बातो का भी ज़िक्र है। मै उन की महत्ता को कम नही करता, पर बहस के बडे-बडे मामलो को तय करने के लिये वे ही अन्तिम आधार नही बनती। उनको तो एक मानवीय दृष्टि से ही सुलझाया जाना चाहिये। आपने अपने आलोचको के विभिन्न भाषणो तथा वक्तव्यो के कुछ अश उद्धृत किये है और उनका अनौचित्य दिखलाया है। इन मे से कुछ तो सी० आई० डी० की रिपोर्टों मे से लिये गये है और कुछ प्रसंग को तोड-मरोड कर रखे गये है और कुछ दूसरे ऐसे है जिनका केवल चलताऊ तौर पर ज़िक्र किया गया है। मै समान रूप से आपके भाषणो और वक्तव्यो में से कुछ अश उठा कर उनका गभीर अनौचित्य दिखा सकता । पर इस बात से इस समय हमे कोई मतलब नही। प्रमुख बातो

मे से एक तो यह है कि जम्मू और काश्मीर राज्य को भारत मे अन्तिम और अखण्ड रूप से किस तरह मिलाया जाय ? आप और श्री नेहरू कभी-कभी बडे ज़ोरदार भाषण देकर यह घोषणा करते है कि राज्य तो पहले से ही भारतीय संघ का एक हिस्सा है और अब इस बारे मे किसी भी झगडे की ज़रूरत नही ; लेकिन मै यह चाहता हूं कि इस झगडे का वैधानिक दृष्टि से एक अन्तिम फैसला हो जाय। जितनी जल्दी ऐसा होगा उतना ही सब का फायदा है।

ऐसा कहा जाता है कि इस प्रश्न को जम्मू और काश्मीर की जनता की इच्छा के अनुसार हल किया जायेगा। ऐसा विशेष रूप से केवल आपके ही राज्य के लिये नही कहा गया था सन् १९४७ मे ब्रिटिश सरकार ने जो एक चालबाज़ी की नीति अपनाई उसके फलस्वरूप ५०० अथवा उससे भी अधिक तथाकथित भारतीय राज्य सिद्धान्ततः आज़ाद प्रदेश बन गये और अंग्रेज़ी सरकार ने इस बात की हठ की कि उनका भारत अथवा पाकिस्तान में मिलना उनकी मर्ज़ी पर निर्भर रहना चाहिये। अविभाजित भारत को भारत तथा पाकिस्तान—इन दो टुकड़ो में ही बाट कर उन्हे सन्तोष नही हुआ था। वे इस बात के लिये उत्सुक थे कि उस समय भारतीय रियासते कहलाने वाले ५०० के लगभग छोटे-बडे भारतीय प्रदेशो को एक झूठी सार्वभौम सत्ता प्रदान करके फूट और गडबडी के बीज बो दिये जायें। कांग्रेस इस स्थिति को स्वीकार करने के लिये मजबूर हो गई थी और तभी से भारत संघ मे इन रियासतो को मिला लेने का कठिन और नाज़ुक काम शुरू हो गया था। सरदार पटेल के महान ओजस्वी व्यक्तित्व और उनकी नीति-कुशलता को धन्यवाद है कि तीन रियासतो—जम्मू और काश्मीर, हैदराबाद और जूनागढ —के सिवाय शेष सभी रियासते बिना एक बूंद भी खून बहाये पूरी तरह भारत मे मिला ली गईं। अन्त मे हैदराबाद और जूनागढ भी भारत मे मिल गये। सैद्धान्तिक दृष्टि से अपना मामला आप सुलझाने का इनका भी उतना ही हक था जितना कि आपके राज्य का। लेकिन इन्हों ने विदेश नीति, सुरक्षा और सचार—ये तीन विषय ही भारत को नही सौपे, बल्कि दूसरे बहुत से विषय भी उसे दे दिये और इस प्रकार वहा सारे देश के अनुरूप ही एक सविधान लागू हो गया।

आप के मामले मे अन्तिम रूप से प्रवेश पाकिस्तान से युद्ध होने के कारण न हो सका। अब राज्य की इच्छा को जानने का यह उपचार किस प्रकार पूरा होगा ? मेरा अपना व्यावहारिक सुझाव यह है कि यह सविधान सभा, जिसे आपने बालिग मताधिकार के आधार पर चुना है, इस प्रश्न का निर्णय कर दे और भारत उस निर्णय को स्वीकार कर ले। आपने यह कह कर मेरे इस निर्णय का मजाक उड़ाने की कोशिश की है कि यह प्रस्ताव ज़रा भी युक्ति-संगत नही है क्योकि प्रजा परिषद ने इन चुनाव को, विशेषकर जम्मू के चुनाव को, असगत ठहराया है। आप ने और श्री नेहरू ने प्रजा परिषद की इस बात का खडन किया है। आप इन दोनो बातो को एक साथ नही मान सकते। आपके हाथो मे आज अधिकार है और आप इसी बुनियाद पर चल रहे है कि सविधान सभा पूरी तरह प्रतिनिधि है। आपके विरोधी आपको निमन्त्रित करते है कि आप इसी आधार पर भविष्य का फैसला कर डाले। फिर तो संयुक्त राष्ट्रसंघ और पाकिस्तान इस फैसले को लेकर जो झगडा उठाये उसी का प्रश्न सामने रह जाता है। मेरी विनीत सम्मति मे इनमे से किसी को भी प्रवेश के बारे मे कुछ कहने का हक नही है। भारत संयुक्त राष्ट्रसंघ में प्रवेश के प्रश्न को लेकर नही गया था, बल्कि भारत पर, जिस में कि जम्मू और काश्मीर भी

शामिल है, पाकिस्तान के हमले की समस्या को लेकर गया था। वहां भारत के इस मामले के साथ ईमानदारी का बर्ताव नही किया गया। यह तो अच्छा ही हुआ कि भारत ने संयुक्त राष्ट्र संघ को यह भरोसा दे दिया कि राज्य का अन्तिम रूप से प्रवेश जनता की इच्छा के अनुसार ही होगा। अगर जनता की यह इच्छा आज बालिग़ मताधिकार की बुनियाद पर चुनी गई संविधान सभा प्रकट कर दे तो कोई भी व्यक्ति तर्क अथवा न्याय की दृष्टि से ऐसे फैसले को चुनौती नहीं दे सकता। ऐसे कदम की जरूरत और उसके महत्व को कम नही किया जा सकता। एक बार जहां यह पता लगा कि मामले का अन्तिम फंसला हो गया है, भविष्य के बारे में सभी भय और सन्देह गायब हो जायेगे और सभी तत्व अपने आपसी मतभेदों को भुला कर जम्मू और काश्मीर राज्य के पुर्ननिर्माण के काम में एक साथ आगे बढ सकेगे।

अगला विशेष प्रश्न यह है कि किन विषयो के सम्बन्ध में रियासत का प्रवेश हो। यहा आपका धारा ३७० का एक बहुत विस्तृत अर्थ करना और यह दावा करना कि आप ऐसी प्रभुता का उपभोग कर रहे है जैसी कि शेष भारत में किसी को भी नही मिली है, एक अनावश्यक मतभेद और भयानक उलझन पैदा करता है। प्रजा परिषद की माग क्या है, और हम आप से क्या प्रार्थना करते है ? हमारा यही कहना है कि कृपा कर स्वतत्र भारत के संविधान को स्वीकार कर उसे जम्मू और काश्मीर राज्य पर भी उसी प्रकार लागू कीजिये जिस प्रकार वह 'ब' भाग के दूसरे राज्यो पर लागू हुआ है। इस प्रकार की प्रार्थना मे क्या कुछ भी साम्प्रदायिक अथवा प्रतिक्रियात्मक है ? यहा भी मैंने समझौते का एक आधार आपके सामने रखा है और मेरी समझ मे कोई कारण नही आता कि कोई भी इसे क्यो न माने। सविधान में कुछ बुनियादी धाराये है जो सारे भारत पर समान रूप से लागू होनी ही चाहिये। वे इन विषयो से सम्बन्ध रखती है: मूल अधिकार, नागरिकता, सर्वोच्च न्यायालय, राष्ट्रपति के सकटकालीन अधिकार, आर्थिक दृष्टि से विलीनीकरण जिस मे सीमा-चुगी का खत्म किया जाना भी शामिल है, चुनावो की नीति तथा राष्ट्रीय योजनाये। इन मे से कुछ के सम्बन्ध में तो आपने भारतीय सविधान को सशोधित अथवा मूल रूप मे मान लिया है। कृपा कर सभी विषयों को ज्यो का त्यो स्वीकार कर लीजिये। भूमि के बारे मे आप अपना एक खास इन्तजाम कर सकते है। दूसरे मामलों के बारे मे आप कुछ समय लेकर एक विस्तृत पत्रक तैयार कर सकते है और यह बता सकते है कि उन विषयो मे आप भारतीय सविधान की धाराओ मे किस हद तक फेर-बदल चाहते है ? ऐसा करना तभी न्यायसगत होगा जब उससे आप के राज्य का सर्वोत्तम हित होता हो और भारत की एकता और दृढता के लिये वह हानिकारक सिद्ध न हो। आपके प्रस्तावो पर शान्तिपूर्वक विचार किया जा सकता है और आपसी मशविरे से उनका फैसला किया जासकता है। मै यह नही कहता कि संविधान इतना पवित्र है कि उसकी कोई भी धारा देश के लिये आवश्यक होने पर भी न बदली जाये।

इस प्रकार एक तर्कपूर्ण ढग से बढने के बदले आपने तो अपने और अपने राज्य के लिये एक अलग स्थिति ही बनाने का रुख दिखाया है। एक चुना हुआ प्रधान और एक अलग झडा स्वीकार करना इसी दृष्टिकोण से देखे जायेंगे. झण्डा तो एकता का चिन्ह है। किसी

विरोधी दल के नेता के भाषण का हवाला देना, जिस मे कि उस ने यह घोषित किया था कि वर्तमान झण्डे के स्थान पर भगवा ध्वज लगाया जायेगा, यह बताता है कि आप ने उन लोगों के दृष्टिकोण को नही समझा जो कि एक मात्र जम्मू और काश्मीर के लिये एक अलग झण्डे की जरूरत का विरोध करते हैं। ऐसा किसी ने भी नही कहा है कि प्रान्त विशेष मे भगवे झण्डे के समर्थक दल का शासन आने पर वहा भगवा लगा दिया जायेगा, जबकि शेष भारत मे, राज्य विशेष मे शासनारूढ दल की भावना के अनुकूल एक से अधिक झण्डे होगे। यदि कभी जनता के प्रतिनिधियों की इच्छा के अनुकूल राष्ट्रीय झण्डे का रूप बदला गया तो वह सारे देश के लिये ही बदला जायेगा। पर यदि प्रत्येक राज्य अधिकारारूढ दल की इच्छा के माफिक अलग झण्डा रखने लगे तो इस प्रकार भारत की राष्ट्रीय और राजनीतिक एकता को एक गहरा धक्का लगेगा और यही आप करने जा रहे है।

आप अपने आप को जम्मू और काश्मीर का प्रधान मंत्री कहते है। पर प्रधान मंत्री तो एक ही हो सकता है और वह है सम्पूर्ण भारत का प्रधान मंत्री। दूसरे सभी राज्यों मे मुख्य प्रशासक नागरिक मुख्य मन्त्री कहलाता है। लेकिन आप तो अपने लिये एक अलग नाम और स्थिति चाहते है। आपके राज्य का प्रधान सदरे-रियासत ही कहलाना चाहिये। पर भारत मे केवल एक ही राष्ट्रपति हो सकता है और वह भारत का राष्ट्रपति है। दूसरे राज्यो के प्रधान गवर्नर, राजप्रमुख अथवा संविधान के अनुसार किसी भी दूसरे नाम से पुकारे जा सकते है। एक लोकतंत्र के अन्दर दूसरा लोकतंत्र नही बन सकता। एक ही सार्वभाम संसद बन सकती है और वह है भारत की संसद। जाने अथवा अनजाने आप जम्मू और काश्मीर राज्य के लिये एक सार्वभाम सत्ता बनाने जा रहे है। दो राष्ट्रों के सिद्धान्त ने भारत के दो टुकड़े किये है और काश्मीर राष्ट्र की बात कह कर आप एक तीन राष्ट्रों के सिद्धान्त को जन्म देने जा रहे है। ये सब खतरनाक चिन्ह है और आप के राज्य के लिये अथवा सारे भारत के लिये यह शुभ नही है।

मुझे आप की यह बात जरा भी तर्कपूर्ण नही लगती कि भारत का संविधान आपके राज्य पर लागू नही होना चाहिये। आपका कहना केवल यह है कि यदि ऐसा किया गया तो काश्मीर के मुसलमान पाकिस्तान की तरफ झुक जायेंगे। मै मुसलमानो के मन मे पूरे विश्वास और आपसी समझौते का वातावरण पैदा करने की जरूरत के प्रति लापरवाह नही हूं। लेकिन इस प्रकार की कोशिशें कुछ सीमाओ तक ही सीमित रहनी चाहिए। ऐसी कोशिशें ऐसे ढग से नही की जानी चाहिये जिससे निश्चित अल्पसंख्या मे राज्य मे रहने वाले गैर-मुसलमानो के मन मे गम्भीर भय और सन्देह पैदा हो सके। मुझे दुःख है कि बहुत सी स्थितियो मे आपकी नीति से उनके मन पर जो असर पडा है उसकी जरा भी परवाह नही की गई है। अगर मुसलमानो का विश्वास भारत पर से हटता जाय और वे बेरोक पाकिस्तान की ओर झुकते जाये तो इस से वे ही उलझने पैदा होगी जो कि श्री जिन्ना की प्रवृत्ति से पैदा हुई थी। भारत उस संविधान के मातहत शासित होता है जो किसी साम्प्रदायिक अथवा वर्गगत विचारो पर टिका हुआ नही है। अगर इस संविधान के मातहत सुरक्षा और सम्मान के साथ चार करोड़ मुसलमान रह सकते है तो काश्मीर के २३ लाख मुसलमान, जो कि अपने राज्य मे बहुमत रखते है, क्यों भारत मे बाहर

आने की इच्छा कर सकते है, जब तक कि वे ईमानदारी से यह महसूस न करते हो कि उन का भविष्य पाकिस्तान जैसे एक इस्लामी देश के हाथ में ही रहना चाहिये ? बाजारू मोल-भाव के तरीक़ो को अपना कर असाम्प्रदायिक प्रजातंत्र का विकास नही हो सकता। मेरा यह पूरा विश्वास है कि वह समय आयेगा जब सब लोग, हिन्दू-मुसलमान और दूसरे, इस बात को महसूस करेगे कि धार्मिक बुनियाद पर देश के बटवारे से किसी भी सम्प्रदाय को फ़ायदा नही पहुंचा है, उल्टे उससे देश की उन्नति को धक्का लगा है। मै चाहता हू कि आप सारे जम्मू-काश्मीर राज्य के, जिसमे कि हमारे खोये हुए प्रदेश भी सम्मिलित हो, प्रधान बन कर राज्य के सभी भागो का विश्वास प्राप्त करे और इस राज्य को भारत की एकता और आजादी का सबसे पहला सरक्षक बनाये। इस सब के लिये आप एक सच्ची राजनीति की भावना से काम करे।

पिछली जुलाई मे श्री नेहरू के साथ हुए समझौतो को लागू करने मे देरी का जो कारण आपने बताया है वह बड़ा कमजोर है। नवम्बर, सन् १९५२ मे, यानी समझौता होने के चार महीने बाद, आप केवल उन्ही हिस्सो को कार्यान्वित कर सके जिनको आपने पसन्द किया और जिनका खुला विरोध हुआ क्योंकि वे भारतीय सविधान के समान आदर्श से राज्य को और भी दूर खीच ले जाते थे। मै बाकी समझौते को लागू न करने का कोई भी न्यायपूर्ण कारण नही देखता। यदि कुछ औपचारिक कार्यवाहिया और की जानी थी, तो आप एक अथवा दो महीना और भी आसानी मे ठहर सकते थे, न कि आप समझौते को तोड़ कर उसका एक अश ही लागू करते। आप कहते है कि हम और दूसरे लोग समझौते को पसन्द नही करते, इसलिये, इसके लागू होने अथवा न होने मे हमारे लिये क्या अन्तर पड़ता है? यह तो एक बड़ा ही हलका तर्क है और समस्या को सुलझाने का एक गलत तरीका है। हमारा विचार है कि भारतीय सविधान की कुछ धाराओ को जम्मू और काश्मीर पर लागू करने विषयक समझौते मे सुधार सम्भव है और इस को और भी विस्तृत किया जा सकता है। आपके इस दिशा मे कुछ भी न करने से ऐसा करना ज्यादा अच्छा रहता और कोई भी उसके इस प्रकार लागू किये जाने का विरोध न करता।

मुझे जम्मू के लोगो पर होने वाली ज्यादतियो और जुल्मो की खबरे बराबर मिलती रही है। इन खबरो की छानबीन करना तो मेरे लिये सम्भव नही है। मैने सचाई जानने के लिये एक प्रतिनिधि-मण्डल भेजा था। इस मे सभी उत्तरदायी लोग थे और उनमे विधान मण्डल के तीन सदस्य भी थे, पर उनको राज्य मे घुसने नही दिया गया। यह एक अजीब स्थिति है कि हम भारत सघ के एक भाग मे बिना विशेष आज्ञा लिये घुस भी नही सकते। दमन, गोलिया और जेलें, समस्या का कोई समाधान प्रस्तुत नही करेगी। आन्दोलन गहराई से फैलता जा रहा है और कटुता तथा रोष बराबर बढ रहा है। ऐसा आन्दोलन साधारण रूप से तो चलना ही नही चाहिये था, पर वह जनता पर लादा गया क्योंकि आपने और दूसरो ने उन्हे अपनी शिकायतें दूर कराने के सभी वैधानिक उपायों से वञ्चित् कर दिया। आपको मूल कारणों की तह तक जाना पड़ेगा और एक सम्मानपूर्ण फैसला करना होगा।

मैंने आपके शासन पर लगाये गये आरोपों का जिक्र नही किया है। वे आर्थिक मामलों, पुनर्वास तथा आपकी भेदभाव की नीति से सम्बन्ध रखते हैं। आपका सीमा के जिलों का फिर से बटवारा करना बुद्धिमानी का काम नही है। कारण कुछ भी क्यों न रहे हों, परिणाम उन मे से कुछ क्षेत्रो के साम्प्रदायिक विभाजन के रूप मे ही प्रगट हुआ है। इसके गम्भीर परिणाम निकल सकते हैं। आपके पत्र मे इस आरोप का कोई उत्तर नही दिया गया है। इस बात को आसानी से बचाया जा सकता था और एक असाम्प्रदायिक बुनियाद पर बटवारा किया जा सकता था। आप ने सदा ही अपने शासन पर लगाये गये सभी आरोपों की जांच करने का वचन दिया है यदि यह काम एक कमीशन को सौपा जाये तो इसके सदस्यों को राज्य के अधिकारियों के प्रभाव मे मुक्त रहना चाहिये और इसका क्षेत्र काफी विस्तृत रहना चाहिये।

मैंने आपके भावी सविधान के स्वरूप का भी कोई निर्देश नही किया है। सम्पूर्ण जम्मू, लद्दाख और काश्मीर घाटी को स्वायत्तता प्रदान करने के प्रश्न पर बाद मे विषय के महत्व को दृष्टि मे रख कर विचार किया जा सकता है। इस समय जिस बात की आवश्यकता है वह यह है कि आन्दोलन को जल्दी से जल्दी समाप्त किया जाय और भविष्य की बातचीत के लिये उचित वातावरण तैयार किया जाय। आपको इस विषय को लेकर आगे आना चाहिये और इस बारे मे मेरी सेवाएं सदा आप को अर्पित है। यदि किसी समय भी आप यह अनुभव करे कि एक सन्तोषजनक फैसला करने के लिये मेरी आवश्यकता है तो सभी पिछले सघर्षो को भूल कर आप की सहायता देने मे मुझे सबसे ज्यादा खुशी होगी। लेकिन किसी के भी हस्ताक्षेप से अच्छा यही होगा कि आप स्वय ही जम्मू के प्रतिनिधियो की एक सभा बुलाये और उसमें आप और श्री नेहरू उपस्थित हो। इस बारे मे श्री नेहरू को जो पत्र मैंने कल लिखा है उसे आप कृपा कर देख ले। यदि हम सब काश्मीर के मामले पर एकमत होंगे और कोई कारण नही कि हम एक मत न हों — तभी हम जम्मू और काश्मीर की एकता को कायम रख सकेंगे और राज्य के उस एक तिहाई भाग को भी वापस लेने के लिये कदम उठा सकेंगे जो कि अभी तक दुश्मनो के हाथ मे पडा है और इस प्रकार हमारे राष्ट्रीय अपमान का कारण बन रहा है। आप विश्वास करे कि मै इस बात के लिये सबसे अधिक उत्कण्ठित हूं कि अविश्वास और कड़ुवाहट से भरा आज का वातावरण खत्म हो जाये। वार्ता को आगे बढाना श्री नेहरू और आपके हाथों मे है। कृपा कर अग्रेजी शासको की नकल करके झूठी प्रतिष्ठा पर मत अडे रहिये। सहन-शक्ति और विवेक के साथ और इस निश्चय को लेकर कि उस दुःखान्त मूर्खता को दुहराया नही जायेगा जिसने कि भारत का विभाजन किया, आइये हम वर्तमान गत्यवरोध को इस प्रकार हल करे जिससे कि जम्मू और काश्मीर ही क्या, सारे भारत का भला हो।

आपका हितेच्छु,
(ह०) श्यामाप्रसाद मुकर्जी

शेख मुहम्मद अब्दुल्ला,
मुख्य मंत्री, जम्मू और काश्मीर,
जम्मू तवी

शेख साहब का उत्तर

जम्मू तवी,
१८ फरवरी, १९५३

प्रिय डा० मुकर्जी,

मै आप के १३ फरवरी के पत्र के लिये, जो मुझे गत शनिवार को मिला, आपको धन्यवाद देता हू । मैने उसे ध्यानपूर्वक पढा है । पर मुझे यह देख कर दुख हुआ कि आप आवश्यक सहानुभूति के साथ हमारी स्थिति पर विचार नही कर सके है और इसके फलस्वरूप जम्मू और काश्मीर राज्य की समस्या को हल करने के तरीकों मे हमारा आपका बुनियादी मतभेद है । मेरा विश्वास है कि इस समस्या मे कुछ ऐसे बुनियादी सिद्धान्त शामिल है जिनको मानने और स्वीकार करने की बहुत जरूरत है जिससे कि राज्य की स्थिति का सन्तुलित अनुमान लगाया जा सके । लेकिन, दुर्भाग्यवश कुछ एकागी विचारो ने आपको एक ऐसा निर्णय करने पर बाध्य कर दिया है जो कि हमारी समस्याओं का एक व्यावहारिक और पुष्ट हल निकालने की दृष्टि से जरा भी न्याय्य अथवा लाभदायक नही है ।

अपने पिछले पत्र मे मैने अपना दृष्टिकोण आपके सामने रखने का प्रयत्न किया था । मुझे पूरा पूरा विश्वास है कि यह दृष्टिकोण उन बुनियादी सिद्धांतो से, जिन पर भारत और इस राज्य का सम्बन्ध आधारित है, मेल खाता है । पर यह दुर्भाग्य ही है कि आप ने हमारे दृष्टिकोण को समझने मे न्याय से काम नही लिया है । "भारतीय सविधान को पूरी तरह लागू करने" का जिक्र करते हुए आप यह समझते है कि हम इसका इसलिये विरोध करते है कि कही "काश्मीर के मुसलमान पाकिस्तान की ओर न झुक जाये ।" यह काश्मीर की जनता की राजनीतिक परिपक्वता के बारे मे एक मिथ्या धारणा है । आपने मुस्लिम साम्प्रदायिकता के विरुद्ध हमारे सघर्ष की सराहना की है और इस बारे मे जो प्रशसात्मक बाते आप ने कही है उनके लिये मै आपका आभारी हू । जब आप इस सघर्ष की सराहना करते है, तब शायद आप यह भूल जाते है कि काश्मीरियो का किसी भी प्रकार की साम्प्रदायिकता से गहरा विरोध है । यह उच्च सिद्धातो के लिये लडा गया एक युद्ध था । हमारा द्वेष-भाव पाकिस्तान की सम्पूर्ण जनता के विरुद्ध नही था, बल्कि हम तो उस देश के उस साम्प्रदायिक और प्रतिक्रियात्मक नेतृत्व के विरुद्ध लडे थे जो ताकत के बल पर हमारे ऊपर अपनी इच्छा लादना चाहता था ।

अब जब कि मैने हिन्दुओं के एक वर्ग की साम्प्रदायिकता की निन्दा की है तब मुझ पर शक क्यो किया जाने लगा है और मेरे उद्देश्यों के बारे मे संदेह क्यो किया जाने लगा है ? साम्प्रदायिकता एक जाति के लिये अच्छी और एक के लिये बुरी नही हो सकती । जैसा कि आप स्वयं स्वीकार करते है, यह एक भयकर उलझन है और जब यह एक पक्ष मे आरम्भ होती है तब विपक्ष मे भी इसकी उतनी ही बुरी प्रतिक्रिया होती है । स्वभावतः ही इसकी एक तरह से निन्दा और दूसरी तरह से प्रशसा नही की जा सकती ।

काश्मीर की जनता का बहुत समय से ऐसा ही विश्वास रहा है। इसी विश्वास का जोर था जिससे काश्मीर की जनता ने ऐसे समय भारत के साथ मिलने का अन्तिम निर्णय किया जब कि इस प्रकार के निर्णय का बिल्कुल ही समय नही था। मुस्लिम साम्प्रदायिकता से लड़ते हुए उन्हे भारत की ओर से भी ऐसे ही ख़तरे का डर था। लेकिन उन्हे विश्वास था कि गाधी जी के नेतृत्व मे भारतीय जनता का बहुमत स्वय भी इसी सकट का मुकाबला कर रहा है। सिद्धान्तों की इसी एकता ने हमारे भाग्य को प्रजातान्त्रिक प्रगतिवादी भारत के साथ जोडने मे हमे बढ़ावा दिया।

अब क्योकि हमारे सम्बन्ध और भी दृढ हो गये है, हमारा इन सिद्धान्तों मे विश्वास और भी गहरा हो गया है। यह अधिकाधिक साफ़ हो गया है कि भारत की जनता ने समग्र रूप से साम्प्रदायिक मार्ग को त्याग दिया है। लेकिन यदि कभी भारत लडखडा जाता है और अपने इन सिद्धान्तो को त्याग देता है, तब भी, मुझे जरा भी सदेह नही कि काश्मीर की जनता साम्प्रदायिकता की ओर नही झुकेगी। इसके लिये किसी प्रमाण की आवश्यकता नही है क्योंकि १९४७ में उसने सच्चाई पर दृढ रहने और झूठ की निन्दा करने के अपने निश्चय और विश्वास की काफी परीक्षा दी है।

आपने बार बार भारत की एकता और दृढता का जिक्र किया है। ये भावनाये हमे भी कम प्रिय नही है। लेकिन इस एकता को लाने के जिन तरीकों का आपने वर्णन किया है क्या वे हमे इस लक्ष्य तक पहुचायेगे? काश्मीर की जनता स्वय ही अपने को प्रगतिशील भारतीय जनता मे मिलाने को आगे बढ़ी, क्योंकि उसने महसूस किया कि स्वतत्रता-प्रिय भारतीय, जिनके साथ कि उसने साम्राज्यवाद और सामन्तवाद से छूटने के लिये युद्ध किया, उसके अधिकारों और उसकी स्वाधीनता का आदर करेगे। भारत के सुलझे हुए लोगो ने इन मानवीय उत्कण्ठाओं का आदर किया और भारत की सविधान सभा ने उन्हे सामाजिक और राजनीतिक उद्देश्यों को प्राप्त करने मे सहायता दी। एक दूसरे के विचारो को इस प्रकार समोने की प्रवृत्ति को अलग होने की इच्छा नही समझना चाहिये। आखिरकार एक प्रजातान्त्रिक देश मे विभिन्न अगों के आपसी सम्बन्धों को रूप देने वाला मूल आधार इन अगो मे से प्रत्येक की, सबके समान हित के लिये, एक दूसरे के निकटतर आने की अपनी इच्छा ही तो है। उनकी आपसी एकता अन्दर से उत्पन्न होती है और यदि यह उन पर लादी जाये तो यह उनके उस सद्भाव और विवेक को ठेस पहुंचाती है जो कि स्वयं-प्रेरित सहयोग और मेल के लिये अनिवार्य होता है। यह समस्या का मानवीय हल है और यही हमारे विचार में एक ऐसा ठीक हल है जो कि हमारे देश मे व्यवहार और उद्देश्य की एकता स्थापित कर सकता है। इतिहास बताता है कि एकता और समानता सम्बन्धी गलत विश्वास बहुत से राष्ट्रों के जीवन में भीषण परिणाम पैदा कर देते है।

मै चाहता हूं कि मानवीय सम्बन्धों की इस बुनियाद को आप स्वीकार करें। आखिर हमने दो राष्ट्रों के सिद्धान्त को क्यों अमान्य किया? इसीलिये कि यह सिद्धांत लोगों

में एक बनावटी विभाजन पैदा करता था और उन पर विचारो की एकता को लादना चाहता था। हम पाकिस्तान से मिलने के लिये इसीलिये तैयार नही हुए क्योकि एक साम्प्रदायिक राज्य के कठोर, बेढंगे ढांचे में बंध कर हमे विकास के लिये अवसर न मिलता। हमारा चुनाव युक्तिसंगत हुआ क्योंकि भारत मे प्रजातान्त्रिक तथा प्रगतिवादी उद्देश्यों को पूरा करने के अवसर दिये गये। आपका यह प्रस्ताव, कि राज्य की आन्तरिक आजादी को कम किया जाय, हमारे लिये ऐसे अवसरो का निषेध कर देगा।

इन सब बातो को भली प्रकार सोचकर धारा ३७० को बनाया गया था। आपने दिवगत सरदार पटेल की राजाओ की रियासतो को भारत मे मिलाने की कोशिश का जिक्र किया है। क्या मैं आप को बताऊं कि यह विशेष स्थिति, जो कि आज हमारे राज्य को प्राप्त है, उन दिवगत सरदार पटेल की दूरदर्शिता और राजनीतिज्ञता का ही नतीजा है? वास्तव में उन्होने ही राज्य और भारत संघ के परस्पर सम्बन्धों की इस बुनियाद को रूप दिया था। धारा ३७० उन्ही की देखभाल मे सविधान मे सम्मिलित की गई थी और उस समय श्री नेहरू भारत मे नही थे। इस विषय मे मैं सरदार पटेल के उन शब्दो को ही यहा उद्धृत किये देता हू जो कि उन्होने राज्य और भारत के वैधानिक सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए कहे थे।

> "जम्मू और काश्मीर सरकार के सामने जो एक खास समस्या है उसको दृष्टि में रखते हुए हमने वर्तमान आधार पर राज्य और सध के सम्बन्धो को बनाने के लिये खास उपायों का नियोजन किया है।"

सामान्यत: दो सरकारों के बीच जो निर्णय होते है वे दोनो के प्रतिनिधियो के जरिये ही होते है और हमारे मामले मे भी सभी निर्णय आपसी मशविरे और वैधानिक स्वीकृति के बाद ही हुए है। यही प्रजातान्त्रिक तरीका है और इस विषय में हमारी स्थिति बिल्कुल नीतिसंगत है। लेकिन आप ऐसे सभी निर्णयो की सगति को चुनौती देते प्रतीत होते है। आप हम से यह आशा नही कर सकते कि हम उनको भंग करे। ऐसे नाजुक मामलो का निर्णय उस दबाव अथवा आतंक के वश मे होकर नही किया जा सकता जिसका आश्रय एक वर्ग के लोगो ने बाहरी प्रेरणा, सहायता और नेतृत्व के बल पर जम्मू मे लिया है।

आपको यह डर है कि राज्य के सम्बन्ध के वर्तमान स्वरूप का झुकाव अलग होने की तरफ है और इस सम्बन्ध मे आपने "तीन राष्ट्रों का सिद्धांत" यह उक्ति कही है।

मैंने अपने पिछले पत्र मे यह बात साफ करने की कोशिश की है कि हमारे फैसले किसी भी दिशा में भारत की एकता के लिये हानिकर नहीं है क्योकि वे सभी भारतीय सविधान की प्रेरणा से किये जाते है। किन्ही विषयों में हमारी नीतियों में जो भिन्नताये रहती है, जिसका कि आपने जिक्र भी किया है, उनका दूसरे राज्यो मे प्रवृत्त प्रमुख नीतियों से कोई विरोध नही होता। हमारे राज्य की भिन्न सामाजिक व राजनीतिक विशेषताओं के कारण भी उनकी जरूरत हुई है। आप यह बात शायद मानेगे कि इस बारे में हमारे निर्णय प्रजातांत्रिक और प्रगतिशील रहे है। उदाहरण के लिये जब आप सदरे-रियासत के चुनाव का जिक्र करते है तब आप शायद यह भूल

जाते है कि दूसरे राज्यो मे भी राज्य सरकारों की सलाह के बाद ही राज्यपालों की नियुक्तियां होती है । हमने यह अधिकार सरकार तक ही सीमित न रख कर उसे विधान-मण्डल को दे दिया है । यह वह सिद्धान्त है जिस का सभी जनतन्त्रवादियो को स्वागत करना चाहिये । फिर आप हमारे राज्य के प्रधान के नाम का भी विरोध करते है । आप शायद नही जानते कि सदरे-रियासत स्थानीय भाषा का एक शब्द है जो उत्तरी भारत के लोगो मे भली प्रकार समझा जाता है । जब आप अग्रेजी नाम "गवर्नर" पसन्द करते है तब क्यो उसके हिन्दुस्तानी रूप, सदरे-रियासत, पर आपत्ति करते है ?

इस बारे मे आप ने गणराज्य के अदर गणराज्य बनाने की बात का भी जिक्र किया है । शायद आप " गणराज्य के अदर राजतन्त्र बनाना ज्यादा पसन्द करेंगे । लेकिन मै आप को यह बता दू कि हमारे स्वायत्त अधिकार उसी पूर्ण स्वायत्त ससद् के द्वारा स्वीकृत हुए है जो कि आज देश की भाग्य-लिपि लिख रही है । मै नही समझता कि इस प्रकार के अधिकार कैसे भारत की एकता को भग कर सकते है और भिन्न राष्ट्रीयता की सृष्टि कर सकते है ? ससद् के एक अधि-नियम के द्वारा एक आन्ध्र राज्य का बन जाना एक दूसरे राष्ट्र का जन्म लेना नही कहला सकता ।

मै आप से आग्रह करूगा कि आप इस प्रश्न को साम्प्रदायिक उद्देश्यो से ऊपर उठने दे । यहा पर हिन्दुओ अथवा मुस्लमानो का कोई प्रश्न नही है । इस स्तर पर पहुच कर बहस बिल्कुल अवास्तविक और अप्राकृतिक उलझनो मे फस जाती है । आप कुछ ऐसा कहते प्रतीत होते है जैसे कि हिन्दू और मुसलमान विरुद्ध दिशाओं मे जा रहे हो । लेकिन समस्या बिल्कुल मामूली है । जम्मू और काश्मीर राज्य प्रजातन्त्र और प्रगति की ओर बढना चाहता है और इस प्रयास मे किसी भी प्रकार की साम्प्रदायिकता एक बहुत बडा खतरा है । मुझे दु:ख है कि आप ने उन सिद्धान्तो को नही समझा है जो कि हमे रास्ता दिखा रहे है । भगवा ध्वज का जिक्र करते हुए आपने कहा है कि यदि देश उसको स्वीकार करता है तो उसको मान्यता देना कोई गलत काम नही होगा । मै नही जानता कि आप महसूस करते है या नहीं कि यह तभी हो सकता है जब सशस्त्र हिन्दू साम्प्रदायिकता भारत पर छा जाये । उस अभागे क्षण मे काश्मीर कहा खड़ा होगा ? मै फिर दुहरा दू कि उस समय भी भारतीय जनता गाधीजी के सिद्धान्तों के लिये अन्त तक लडती रहेगी । राष्ट्रपिता ने व्यर्थ ही आत्म-बलिदान नही किया था । उनका पवित्र बलिदान सदा ही हमे प्रेरणा देगा और बल देगा जैसा कि उसने स. १९४७ के भयानक दिनो मे दिया था ।

प्रजा परिषद का जिक्र करते हुए आप राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ से उसके सम्बन्ध का उल्लेख नही करते । हरएक व्यक्ति इस बात को जानता है कि सन १९४७ मे उस समय, जब कि हम काश्मीर में मुस्लिम साम्प्रदायिकता से उलझ रहे थे राष्ट्रीय स्वय सेवक सघ ने जम्मू मे क्या खेल खेला । मै मानता हू कि उस कष्टप्रद अध्याय को बन्द कर देना चाहिये । लेकिन आपने स्वयं ही कहा है, "हम उस दु:खान्त घटना की सीख को अपने मन मे रखे, जिससे कोई गलती न हो

सके। मै दिल से चाहता हूं कि आप यह सलाह प्रजा परिषद् के नेताओ को दे जो कि जम्मू की १९४७ की दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं से सीधे सम्बन्धित थे। जहा तक हमारा सम्बन्ध है, हम मे कभी भी बदले की भावना नही रही। उल्टे हमने चाहा कि वे उस गलती को सुधार ले जो कि उनसे हो चुकी है। लेकिन सघ के इन नेताओ ने इस प्रवृति की जरा भी सराहना नही की। जब गाधी जी की हत्या होने पर इस सस्था पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया तब वह अपने उसी कार्यक्रम और नेतृत्व को ले कर प्रजा परिषद् के रूप मे प्रकट हो गई। प्रजा परिषद् के प्रति मेरे विचार किसी पक्षपात से प्रेरित नही है, बल्कि उसकी वर्तमान हलचलो से ही प्रभावित है। मुझे जरा भी सदेह नही कि इस के नेता राज्य को विनाश की ओर ले जा रहे है। वे राज्य की और साथ ही भारत की बुनियाद को हिलाना चाहते है। जन साधारण की भावनाओ को उभारने के लिये कुछ झूठे नारे बना लेने मे इस संस्था के नेतृत्व को प्रजातान्त्रिक अथवा असाम्प्रदायिक रूप नही मिल सकता।

आप कहते है कि वर्तमान आन्दोलन इसलिये चलाया गया क्योंकि ये नेता अपनी शिकायतें वैधानिक तरीको से दूर नही करा सके। किन तरीको पर ये नेता चले? हिसा, आतक तथा नागरिक अधिकारो का भीषण दुरुपयोग—यही हथियार रहे जिनसे कि उन्होंने सरकार को चुनौती दी। हर साल एक या दूसरा बहाना ले कर आन्दोलन चलाये गये। ये तरीके वैधानिक नही कहे जा सकते।

ऐसे व्यवहार को दृष्टि मे रखते हुए सरकार और प्रजा परिषद् के बीच एक समान स्तर कहा रहता है? आप हम से यह आशा नही कर सकते कि हम प्रजापरिषद् के दृष्टिकोण को समझने के लिये उन बुनियादी सिद्धातों से दूर हट जाये जिनके लिये कि हम इन सारे वर्षो मे युद्ध करते रहे है। जब तक यह सस्था राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के नेताओं के हाथ मे खेलती रहेगी, तब तक हमारे लिये यह सम्भव नही है कि हम इस सस्था को मान्यता दे। उन लोगो से हम निश्चय ही मिलने को तैयार है जिनका हमसे एक सच्चा सीधा मतभेद हो और राज्य के पतन के आधारभूत विचारो के बारे मे जिनके विचार हमसे अलग न हो। हम ऐसे व्यक्तियो को अपना दृष्टिकोण समझा देने को तैयार है। पर यह हिसा, आतक और दबाव के वातावरण मे सम्भव नही है। मै यह साफ तौर से कहूगा कि प्रजा परिषद् का वर्तमान नेतृत्व अपने उद्देश्य मे पूरी तरह साम्प्रदायिक और विध्वसक है। उस से समान स्तर पर मिलना हमारे लिये कभी भी सम्भव नही हो सकता।

हम पर यह आरोप लगाना कि हम ने डोगरों पर आक्रमण किया, हमारे प्रति एक बहुत बडा अन्याय है। मै अत्यन्त नम्रता के साथ यह कह दू कि हम कभी भी जातिगत पक्षपातों से प्रभावित नही हुए है, और न ही हमने जनता के किसी भी वर्ग को दबाना चाहा है। मुझे यह बताने की जरूरत नही कि शस्त्रों की शक्ति से चलने वाला शासन पक्का नही हो सकता। मैंने सदा ही जनता के सभी वर्गों की, चाहे वे लद्दाख और जम्मू में रहते हों, चाहे काश्मीर में, एकता पर जोर दिया है। इस एकता का आधार आपसी सम्मान और सब की समान

समस्याओं को सुलझाने मे सबका समान भाग, यही मैंने माना है। बहुत समय पहले से ही हमने एक बात महसूस की है कि धर्म और जाति के ख्याल को छोड़ कर जनता अपने लिये एक सम्मानपूर्ण स्थान तभी बना सकती है जब वह अन्याय और सामाजिक अत्याचारों के विरुद्ध सगठित हो सके। इस मे कोई सन्देह नही कि डोगरा शासन के लाभों के होते हुए भी डोगरा जन-साधारण अभी तक बडी ही दुर्दशा और दीन अवस्था मे रह रहे है। जमीदारो का एक छोटा सा वर्ग किस प्रकार उन्हे उस बुरी दशा मे रखे हुए है, इस बात का जिक्र ही हमने डोगरा लोगो के विषय मे कुछ कहते हुए किया होगा। आप यह कैसे आशा कर सकते है कि हम सारी डोगरा जाति की निन्दा करेगे? सीधी सादी ईमानदार, स्वामिभक्त और बहादुर जाति के रूप मे हम उन से भली भानि परिचित है, यद्यपि यह एक दु ख की बात है कि उनके सीधेपन का फायदा उठाकर कुछ लोगो ने उन्हे गलत रास्ते पर चलाने की कोशिश की।

आपने महाराजा के प्रति मेरे विरोध का भी जिक्र किया है। साम्प्रदायिक ख्याल को लेकर भारत मे कुछ लोगो ने उन के प्रति बडी रुचि दिखाई। एकतन्त्रवाद के विरुद्ध चलने वाली अपनी लडाई मे एक सम्मान का स्तर हमने सदा बनाये रक्खा, क्योंकि हम यह समझते थे कि यह लडाई किसी व्यक्ति विशेष के विरुद्ध न हो कर एक प्रशासन-प्रणाली के विरुद्ध है। यह बात आसानी से भुला दी जाती है कि आज भारत और यह राज्य जिन उलझनों मे पड गये है उनका उत्तरदायित्व महाराजा पर ही है। - वे राज्य के भविष्य के बारे मे जनता की राय ले सकते थे। "पर अनिश्चितता की अटूट बीमारी" के कारण वे ऐसा न कर सके जिसका परिणाम आज की यह सारी गडबडी हुआ। उस अच्छे समय मे, जबकि सारे देश का भविष्य ही निश्चित किया जा रहा था, और उसे एक अन्तिम रूप दिया जा रहा था, महाराजा ने राज के उन सभी राष्ट्रीय एव देशभक्त लोगो को, जो कि भारत की राष्ट्रीय शक्तियों के साथ थे, जेल में ठूस दिया। इस प्रकार राज्य साम्प्रदायिक और विध्वसक शक्तियो के हाथ मे तब तक के लिये पड गया जब तक कि काश्मीर पर हमला नही हो गया। वे सारे प्रयत्न, जो कि भारत के प्रमुख नेताओं - गाधीजी, सरदार पटेल, श्री जवाहरलाल नेहरू और उस समय के कांग्रेस अध्यक्ष श्री कृपलानी - ने राज्य और साथ ही साथ भारत के लिये उस दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति मे हस्तक्षेप करने के लिये किये, राज्य की देशभक्त और राष्ट्रीय शक्तियो से कोई सम्बन्ध न रखने की उनकी हठ ने बेकार कर दिये। जैसा कि आप जानते ही होंगे, महाराजा ने एक सुरक्षित शक्ति और स्थिति बनाने सम्बन्धी बहुत से हवाई किले बना रखे थे और राज्य को भारी संकट मे डाल देने का खतरा उठा कर भी वे भारतीय नेताओ की सलाह मानने को तैयार नहीं थे।

इन सभी महत्वपूर्ण दिनों मे महाराजा ने अपने को उन विदेशियों के प्रभाव मे बहने के लिये छोड़ दिया था जो कि अपनी अलग योजनायें बना रहे थे और जो उस समय प्रमुख पदों पर बैठे थे। विदेशियों के इस गुट्ट ने उन्हें इतनी तक हिम्मत दिलाई कि उन्होंने श्री नेहरू को, जबकि वे उस महत्वपूर्ण समय में राज्य की सहायता करने जा रहे थे, कोहला में कैद कर लिया। भारतीय जनता ने इस धृष्टता को भारत राष्ट्र का अपमान समझा और इसकी

प्रतिक्रिया सुदूर दक्षिण तक में हुई जहां महाराजा के व्यवहार के खिलाफ प्रदर्शन हुए, जिन पर गोली चलाई गई और बहुत से आदमी मारे गये ।

विभाजन के फलस्वरूप राज्य की सीमाओ पर एक आग सी भड़क उठी जिसने राज्य की स्थिति को बड़ा ही कठिन बना दिया। लेकिन इस भीषण समय मे भी महाराजा ने राज्य के भारत मे प्रवेश के सम्बन्ध मे फैसला करने से इन्कार कर दिया । इसी बीच पाकिस्तान ने काश्मीर पर आक्रमण कर दिया । ऐसी परिस्थिति मे जनता के साथ मिलकर हमलावरो की चोटो का मुकाबला करने की बजाय वे उसका साथ छोड़ कर जम्मू मे एक सुरक्षित जगह मे चले गये जहा उन्होने सैनिक हिन्दू साम्प्रदायिको के साथ सम्बन्ध जोड लिया और इस तरह पहले से बिगड़ी हुई हालत को और भी बिगाड़ दिया। जिन महाराजा मे आपने इतनी रुचि दिखाई है उनके ये देश-विरोधी और राष्ट्र-विरोधी कारनामे है ।

अपने पिछले पत्र मे मै ने जम्मू से सम्बन्धित विभिन्न प्रश्नो के विषय मे अपने दृष्टकोण को साफ करने की कोशिश की है। सरकार ने पूरे सबूत के साथ यह साफ़ कर दिया है कि जम्मू के लोगो के साथ कोई भेदभाव की नीति नही बरती गई है। और अपने शासकीय कामों मे सरकार किसी प्रकार के साम्प्रदायिक खयालो से प्रेरित नही होती । दुर्भाग्यवश इतने पर भी आप को विश्वास नही होता और आपने फिर उन आरोपो को दुहराया है। मै नही जानता कि जब हमारे दृष्टिकोण को समझने की आपकी कोई इच्छा नही प्रतीत होती तब क्या कहा जाये ? पूरी कोशिश करने पर भी हमारे उद्देश्यो पर शक किया जाता है। हम ऐसी दिशा मे जनता के ऊपर ही यह बात छोड सकते है कि वह हमारी जाच करे।

आपने फिर भारत-काश्मीर समझौते को लागू करने मे होने वाली देरी का जिक्र किया है। इन समझौतो को भारत सरकार और ससद् तथा राज्य सरकार और उसकी सविधान सभा ने मान लिया है। उनको उपयुक्त समय पर लागू कर दिया जायेगा। पर १२ फरवरी १९५३ के अपने पत्र मे आपने श्री नेहरू के सामने जो बातें रखी है उन मे आप ने प्रस्ताव किया है कि इन समझौतो को पूरी तरह खत्म कर दिया जाय। इन विरोधी बातो का मै क्या करूं ? समझौते आप को स्वीकार नही है और तब भी आप उनको जल्द लागू कराना चाहते हैं ।

जबकि आपने फिर से इस सरकार के दमनपूर्ण तरीको का जिक्र किया है, मै यह दुहरा देना चाहता हू कि किसी भी अवसर पर बल-प्रयोग करने मे हमे कोई प्रसन्नता नही होती। लेकिन आप हिसा और अराजकता की उस गहराई को महसूस करते प्रतीत नही होते जो कि जम्मू में फैल रही है। स्वाभाविक रूप से ही, आप हमसे यह आशा रखेगे कि हम शासन की अपनी जिम्मेदारियों को ठीक तरह निभाये जिससे शान्ति और व्यवस्था बनी रहे तथा दैनिक काम काज रुक न जाये ।

हमने अत्यधिक धीरज से काम लिया है। लेकिन यह देख कर बड़ा दुःख होता है कि आप हमारी स्थिति को नही समझ पाते। किसी भी राज्य की प्रतिष्ठा के लिये यह एक

अपमानजनक बात है कि उस का सर्वोच्च न्यायाधीश भी पक्षपातरहित नहीं है। इससे पता लगता है कि राज्य के किसी भी अंग मे जरा भी विश्वास बाकी नहीं बचा है।

मैं आप को सहायता का हाथ बढ़ाने के लिये हृदय से धन्यवाद देता हूं। मैं समझता हूं कि राज्य की सब से बड़ी सहायता आप हमारे दृष्टिकोण पर निष्पक्ष रूप से विचार करके और उसको समझ कर ही कर सकते हैं। इस भावना की अनुपस्थिति में राज्य की समस्याओं का शान्तिपूर्ण और सक्रिय हल निकालना हमारे लिये एकदम कठिन है।

आपका शुभेच्छु
(ह०) एस० एम० अब्दुल्ला

डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी,
३०, तुगलक क्रेसेंट,
नई दिल्ली

डाक्टर मुकर्जी का पत्र

३०, तुगलक क्रेसेंट,
नई दिल्ली,

२३, फरवरी, १९५३

प्रिय शेख साहब,

आप के १८ फरवरी के पत्र के लिये धन्यवाद। मैं ने उसे बड़ी सावधानी से पढ़ा। यह स्वाभाविक है कि मैं पत्र-व्यवहार चलाने के लिये ही आप के साथ लम्बी-चौड़ी लिखा-पढ़ी नही करना चाहता। लेकिन आप के पत्र में कुछ महत्वपूर्ण बाते है, जिन का मै उत्तर देना चाहता हू। आप को पत्र लिखने का मेरा मुख्य उद्देश्य यह रहा है कि क्या हम किसी भी तरह शान्तिपूर्ण ढग से इस सकट को दूर कर सकते है, एक दूसरे के विचार जान सकते है और ऐसा वातावरण पैदा करने की कोशिश कर सकते है, जिस से कि हम सब अपने मतभेदो के बावजूद जम्मू और काश्मीर राज्य का निर्माण मिलजुल कर भारतीय सघ के एक अभिन्न अग के रूप मे कर सके ?

आप ने इस बात पर जोर दिया है कि मुझे यह बात ठीक-ठीक समझ लेनी है कि भारत और आप के राज्य के सम्बन्धो के मूलभूत सिद्धान्त क्या है ? दुर्भाग्य से आप के सारे सिद्धान्त का आधार सन् १९४७ मे अग्रेज सरकार द्वारा पैदा की गई एक वैधानिक कल्पना की अटूट मान्यता है, जबकि उस ने भारत को न सिर्फ दो अलग-अलग देशो मे विभाजित करने बल्कि ५०० से अधिक छोटी-बड़ी इकाइयो की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न इलाको के रूप मे स्थापना करने की भी कोशिश की थी। साधारण रूप से, जब सन् १९४७ मे अग्रेजो ने भारत से हटने का फैसला किया उस समय ब्रिटिश सरकार और पार्लियामेंट को चाहिये था कि वह सारी सत्ता आप से आप उत्तराधिकारी सरकार को सौप देती। अविभाजित भारत के दो भागो मे बाटे जाने के बाद, स्वाभाविक यह होता कि विभाजित भारत की सरकार को, नवनिर्मित पाकिस्तान को छोड़ अविभाजित भारत के समस्त इलाको की उत्तराधिकारिणी सरकार माना जाता। अविभाजित भारत की राजनीतिक एकता तो एक सचाई थी और यह सचमुच ब्रिटिश-काल की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण सफलता थी। यह प्रश्न तो उठता ही नही कि भारत की कोई भी इकाई किसी भी हालत में देश से अलग होने का दावा कर सकती है। अग्रेज ऐसी किसी भी कोशिश को देशद्रोह समझता। अग्रेज सत्ता हस्तातरित करते समय इस सयुक्त राजनीतिक ढाचे को कई हिस्सो मे बाटना चाहता था। उस ने भारत के लोगो या देशी रियासते कहलाने वाले प्रदेशो के प्रति सद्भाव के कारण ऐसा नही किया। उस का उद्देश्य यह था कि नवीन भारत को न सिर्फ साम्प्रदायिक पाकिस्तानी राष्ट्र के निर्माण से, बल्कि बड़ी सख्या मे तथाकथित स्वतत्र इलाको के निर्माण से जो आसानी से भारत में न मिलना चाहेगे, सचमुच मे सकट का सामना करना पड़े। उस समय काग्रेस को बाध्य हो कर यह स्वीकार करना पड़ा था, क्यों कि वह उस समय किसी भी प्रकार ब्रिटिश राज्य का खात्मा करना

चाहती थी। ब्रिटिश योजना की तीन मुख्य बातें थी–(१) सर्वोच्च सत्ता का सभी प्रकार से अन्त, (२) इस प्रकार से जो राज्य स्वतन्त्र बनें, उन्हें अपने प्रवेश के बारे मे अपने भविष्य का फैसला करने का पूरा अधिकार था। (३) प्रवेश तीन विषयों के बारे में होना था, जो इस प्रकार थे— वैदेशिक मामले; संचार और सुरक्षा। बाकी मामलों के बारे मे ऐसी कोई बात नही की जा सकती थी जो वे न चाहते हो।

स्पष्ट है कि इन सब का एक ही उद्देश्य था और वह यह था कि ऐसी परिस्थितिया पैदा की जाये कि नई सरकार को सुदृढ-सगठित भारत के निर्माण मे कठिनाइयो का सामना करना पड़े।

आप को उन दिनो की याद दिलाना उचित ही है जब आप इडियन नेशनल कांग्रेस के नेताओ के साथ मिल कर अपने राज्य मे लोकराजवादी अधिकारो के लिये सघर्ष कर रहे थे, जो उस समय तथाकथित ब्रिटिश भारत मे ऐसा ही काम कर रही थी। यह स्पष्ट है कि उस समय भी सभी की इच्छा यह थी कि एक सगठित भारत बनाया जाय जो सही अर्थ मे लोकतन्त्र के सिद्धान्तो पर आधारित हो। उन दिनो कोई भी यह अनुमान नही लगा सकता था कि कभी भारत का साम्प्रदायिक या अन्य किसी आधार पर विभाजन हो सकता है या उस का कोई भी भाग अलग वैधानिक अधिकार मागेगा। आज आप की समस्त विचारधारा सन् १९४७ मे अग्रेजी राज्य के खत्म होने पर सर्वोच्च अधिकार प्राप्त करने की भावना के आकस्मिक पुनरुत्थान पर निर्भर करती है, जो आप को नही, बल्कि महाराजा को सौपे गये थे। लेकिन, परिस्थितिया उनके विरुद्ध हो गई। आज आप जिस सीमित या असीमित सर्वोच्च सत्ता का दावा कर रहे है, वह आप को महाराजा से प्राप्त हुई थी, जिन्हों ने अपनी इच्छा से या घटनाओ के प्रभाव से बाध्य हो कर अपने समस्त वैधानिक और कानूनी अधिकार आप को सौप दिये थे। किसी ने भी उन के तथाकथित अधिकारो की परवाह नहीं की। निस्सन्देह स्वतन्त्र भारत की सरकार हमेशा ही उस कानूनी कल्पना के आधार पर चलती रही जो कि अग्रेजी सरकार द्वारा उन पर लाद दी गई थी। लेकिन हैदराबाद, जूनागढ और जम्मू और काश्मीर को छोड दूसरे सभी राज्यों मे वहा के शासको और जनता ने यह समझ लिया था कि उन का भाग्य भारत के साथ इस तरह जकडा हुआ है कि उन्हे अपनी सुरक्षा और देश के कल्याण के लिए भारत मे शामिल हो जाना चाहिये और नये संविधान के अनुसार शामिल होना चाहिये। आप हैदराबाद और जूनागढ का इतिहास जानते है और मुझे यहा उसे दुहराने की जरूरत नहीं है। आज वे भी भारत के अभिन्न अग है। जम्मू और काश्मीर के बारे मे ऐसा नही किया जा सकता था क्योकि पाकिस्तान के साथ युद्ध छिड चुका था। इस बीच भारत के संविधान को अन्तिम रूप दिया जा रहा था। इस प्रकार सविधान मे दूसरे सभी राज्यों को भारत मे मिलाने के बारे मे एक समान कार्यप्रणाली लागू किये जाने के लिये कानूनी मान्यता देने की व्यवस्था करनी पड़ी थी और इसलिए ही ३७०वे अनुच्छेद की जरूरत पडी थी। श्री गोपालास्वामी आयंगर ने विधान परिषद् में यह प्रस्ताव पेश करते हुए, यह बात बिल्कुल स्पष्ट कर दी थी कि यह अस्थायी व्यवस्था है और अन्त में जम्मू और काश्मीर दूसरे राज्यों की तरह भारती संघ मे शामिल हो जायेगा।

इस कारण जब आप यह सोचते है कि जम्मू और काश्मीर राज्य के प्रवेश के लिए विशेष व्यवस्था की गई है या आप को सीमित प्रभुसत्ता प्राप्त है तो आप ऐसा सोचते समय ऐतिहासिक परिस्थिति की बिल्कुल परवाह नही करते जिन के अधीन ब्रिटिश सरकार ने संगठन की योजना भारत पर लाद दी थी। आप कहेंगे कि आप के तथाकथित अधिकारों की उत्पत्ति का कारण जो कुछ भी रहा हो, अब तो वह सत्ता आप के अधिकार मे है और आप उसे अपनी मर्जी के अनुसार काम में लायेंगे। यहां मैं आप से अनुरोध करूगा कि आप कोरा-कोरा कानूनी दृष्टिकोण न अपनायें। आप भारतीय पहले है और कुछ बाद मे। हमें इसी भावना से इस प्रश्न पर विचार करना चाहिये और अपने सम्मिलित प्रयत्नो से ब्रिटिश सरकार द्वारा अपनी अंतिम देन के रूप में छोड़ी गई फूट पैदा करने वाली इस व्यवस्था को बिल्कुल खत्म कर देना चाहिये। आप के और हमारे बीच एक और कड़ी है जो हमे एक दूसरे के अधिक पास लाती है। हमारे नवयुवकों ने दुश्मनों के क्रूर हाथों से इस भूमि को, जो भारत का अंग है, बचाने मे एक साथ रक्त बहाया है।

यह मान लेने पर भी कि ३७०वे अनुच्छेद का आप जो अर्थ लगाते है, वह वैधानिक रूप से सही है, मेरी आप से यह अपील रही है कि आप जितनी जल्दी हो सके, भारत मे राज्य के प्रवेश को, अन्तिम रूप दे दें और इस बात पर भी राजी हो जायें कि भारत का संविधान कुछ संशोधनो के साथ, यदि वह राज्य के कल्याण के लिये विशेष रूप से जरूरी हो और उन से भारत के हितों को हानि न पहुचती हो, लागू किया जाये। अगर वैधानिक बारीकियो को अलग रखा जाये, तो मैं यह नही समझ सकता कि समस्या को हल करने के इस तरीके को किस तरह किसी भी दृष्टिकोण से आप गलत या अनुचित समझते है। यह माग जम्मू के लोगो ने की है और यह आन्दोलन इस आधार पर शुरू किया गया है। आप को यह जानने की कोशिश करनी चाहिये कि उन को किन बातो का डर और सन्देह है। आप को बाहरी बाते उठाये बिना और उन के उद्देश्यो पर सदेह किये बिना उन के साथ समझौता करने की कोशिश करनी चाहिये।

हमें काश्मीर के सवाल को सयुक्त राष्ट्र सघ के पजे से बचाना है। हम प्रवेश के सवाल को नही बल्कि हमले के सवाल को ले कर वहा गये थे। हमे सयुक्त राष्ट्र सघ से कोई सहायता या सहानुभूति की आशा नही करना चाहिये। इस के कारण सर्वविदित है। इस बात मे कोई सदेह नही कि भारत सरकार ने जनमत-सग्रह का आश्वासन दे दिया है। हमें इस एलान पर डटे रहना चाहिये कि प्रवेश का निर्णय जनता की इच्छा से होगा। लेकिन आम जनमत-सग्रह की कोई जरूरत नही है, विशेषकर उस समय जब कि राज्य का एक तिहाई भाग पाकिस्तान के अधिकार मे है। जब मैं ने यह मांग की थी कि जनता की राय अन्तिम रूप से आप के राज्य की संविधान सभा द्वारा पास किये गये एक प्रस्ताव द्वारा निश्चित की जाय, तब मैं ने सिर्फ एक कार्यविधि की ओर ही सकेत किया था, जिस पर कोई निष्पक्ष संस्था द्वारा आपत्ति नही उठाई जा सकती। यदि यह प्रस्ताव पास हो जाता और जैसा पंडित नेहरू ने मुझे अपनी चिट्ठी में लिखा है, उन्हे इस में कोई आपत्ति नही होगी—तो इस मे जहां तक भारत और काश्मीर का सम्बन्ध है—प्रवेश का सवाल अन्तिम रूप से हल हो जायेगा। मेरा खुद का विचार है कि भारत सरकार को यह स्वीकार कर लेना चाहिये और इस मामले को खत्म कर देना चाहिये।

अब यह सवाल बाकी रह जाता है कि इस के सयुक्त राष्ट्र सघ और पाकिस्तान पर क्या असर पड़ेंगे। पाकिस्तान अधिकृत इलाके के भविष्य की समस्या अगर कभी हल की गई, तो वह उसी समय हल होगी, जबकि हम उसे फिर से अपने कब्जे मे कर ले या पाकिस्तान अपनी इच्छा से इस इलाके से हट जाये। यदि प्रवेश का प्रश्न एक बार अन्तिम रूप से तय हो गया, तो जम्मू के लोगों को शान्ति मिलेगी और उन के मुख्य डर और सन्देह दूर हो जायेंगे। यह कहना गलत है कि मै या प्रजा परिषद् यह चाहती है कि काश्मीर घाटी से जम्मू अलग हो जाये। राज्य की अखडता बनाए रखना चाहिये। मै ने जो कहा है वह यह है कि यदि जम्मू के लोग भारत में पूर्ण प्रवेश की माग करे और काश्मीर घाटी के लोग नमनीय एकीकरण चाहे, तो झगडे और मतभेद अवश्यंभावी है। एक हल यह भी हो सकता है कि काश्मीर घाटी को अलग राज्य बना दिया जाय और उसे वह सब दे दिया जाये जो वह अपने विकास के लिये चाहता है। वह तब भी भारतीय संघ का अग बना रहेगा। लेकिन, वह सविधान की विशेष व्यवस्थाओ के अनुसार काम करेगा। मुझे इस विकल्प का सुझाव देते हुए खुशी नही होती। मेरा विचार है कि यदि किसी तरह कोई समझौता न हुआ तो ऐसा करना शायद जरूरी हो जायेगा। लेकिन, हमे इस विचार को बिल्कुल त्याग देना चाहिये और सयुक्त जम्मू और काश्मीर के विषय मे विचार करना चाहिये और यह मालूम करना चहिये कि उसे किस तरह सभी लोगो के सहयोग से मजबूत बनाया जाये।

अब प्रश्न यह रह जाता है कि किन-किन विषयो के बारे मे प्रवेश हो। प्रजा परिषद् का कहना है कि आप के राज्य का शासन भारत के सविधान के अनुसार चलाया जाय जैसा कि सभी 'ख' भाग वाले राज्यो मे होता है। इस सम्बन्ध मे भी मै ने कहा है कि कोई भी चीज नितान्त अपरिवर्तनीय नही है और यदि आप अनुभव करते है कि सविधान मे कुछ ऐसे अनुच्छेद है, जिन मे आप ने राज्य के सम्बन्ध मे कुछ फेर-बदल करने की आवश्यकता है, तो आप को सुझाव रखने चाहिये और ससद् और दूसरे लोग जो सहानुभूति रखते है, निश्चय ही उन पर विचार करेगे। लेकिन कुछ विषयो के बारे मे भारत की एकता बनाये रखनी है और भारत के नागरिको के समान अधिकारो को मान्यता दी जानी चाहिये। इन का सम्बन्ध मूल अधिकारो, नागरिकता; सर्वोच्च न्यायालय; राष्ट्रपति के सकटकालीन अधिकारो; आर्थिक और वित्तीय एकीकरण और चुनाव के सचालन से है। हो सकता है कि इन मे से भी कुछ के बारे मे जम्मू और काश्मीर राज्य कुछ फेर-बदल करना चाहे, जिन पर उन की अच्छाई-बुराई को ध्यान मे रखते हुए विचार किया जायेगा। क्या मै आप से पूछ सकता हू कि यह किस प्रकार गलत या साम्प्रदायिक या प्रतिक्रियावादी है और क्या ये मामले वास्तव मे शान्तपूर्ण ढग से हल नही हो सकते? आप ने कहा है कि प्रवेश के सम्बन्ध मे या भारतीय सविधान की धाराओ को स्वीकार करने मे, हिन्दू और मुसलमान का कोई सवाल नही है। लेकिन क्या मै पूछ सकता हू कि इस प्रस्ताव का विरोध कौन कर रहा है? यह निश्चित है कि आप के राज्य के गैर मुसलमान ऐसा नही कर रहे है। जहा तक वर्तमान सविधान का सम्बन्ध है, मुसलमानो को किस बात का डर है? आप ने यह समझने की कोई आवश्यकता ही नहीं समझी।

अब राज्य के प्रमुख और झंडे का सवाल रह जाता है। यहां पर हमें इस बात का कोई कारण नही दीखता कि आप के राज्य के लिए अलग व्यवस्थायें क्यों की गई? आप शायद विधान परिषद्

की कार्यवाही की चर्चा करें और वे दलीलें दे जो पडित नेहरू ने स्वय राज्य के एक निर्वाचित प्रमुख के विरुद्ध दी थी। स्पष्ट है कि इस प्रकार जिस पार्टी के हाथ मे सत्ता होगी, वह इस पद के लिये किसी न किसी को तो चुनेगी ही। सम्भावना यह है कि वह पार्टी का आदमी होगा और ऐसा व्यक्ति होगा जो राज्य में ही रहता हो। सभी लोगों ने यह स्वीकार किया है कि राज्य का प्रमुख एक महत्वपूर्ण व्यक्ति होना चाहिये और उस की नियुक्ति सीधे सत्तारूढ दल की मर्जी पर निर्भर न करती हो। हो सकता है कि सकटकालीन परिस्थिति मे राज्य के प्रमुख को राष्ट्रपति की ओर से शासन चलाने को कहा जाय। यदि वह पार्टी का आदमी होगा तो सकट के समय राष्ट्रपति को और उसे—दोनों को एक विचित्र स्थिति का सामना करना होगा। राष्ट्रपति द्वारा प्रत्येक राज्य के लिये प्रमुख की नामजदगी करना इस आधार पर ठीक है कि इस प्रकार से एक ओर तो प्रत्येक राजप्रमुख और दूसरी ओर राष्ट्रपति के बीच समान सम्पर्क स्थापित हो जायेगा। अपनी माग को पूरा करने के लिये वह परिवर्तन करना पड़ा।

मुझे 'सदरे रियासत' शब्द पर कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन यहा भी सभी राज्यों के लिये एक नाम क्यों न स्वीकार किया जाये, फिर वह नाम चाहे जो भी हो। यदि प्रत्येक राज्य अपना अलग-अलग नाम रखेगा तो इस मे गड़-बड़ अधिक बढ जायेगी।

जहा तक झडे का सवाल है, भारत के दूसरे भागों मे प्रयोग मे लाये जाने वाले झडे को स्वीकार कर आप ने निस्सन्देह गलतफहमी को दूर कर दिया है। फिर भी, आप यह स्वीकार कर ले कि भारतीय झडे का प्रयोग दिन प्रतिदिन उसी तरह होगा जैसे कि देश के दूसरे भागो में होता है और आप के राज्य का झडा विशेष अवसरों पर भारतीय झडे के साथ फहराया जाय।

मै यह भी समझने मे असमर्थ हू कि आप भगवे झडे को क्यों घृणा की दृष्टि से देखते है? भगवा रग का कोई साम्प्रदायिक अर्थ नही है। वह तो पवित्रता, बलिदान और सेवा का प्रतीक है। हजारो वर्षो तक वह स्वतत्र भारत के झडे का रग रहा है। भारत मे इस रग के तुरन्त ही स्वीकार किये जाने की कोई सभावना नही है। लेकिन, यह आश्चर्य की बात है कि आप इस झडे को "आक्रमणात्मक हिन्दूधर्म" का प्रतीक समझे। क्या असाम्प्रदायिकता का अर्थ यह होना चाहिये कि भारत अपने इतिहास और परम्पराओ को भूल जाये? आप के झडे का रग बिल्कुल लाल है और उस मे एक खास चिन्ह है। यदि आप पर कृपादृष्टि न रखने वाला आपका कोई आलोचक यह कह दे कि यह कम्युनिस्ट झडे को छिपाने का एक ढग है, तो यह अनुचित होगा और आप बुरा मानेगे। मेरा अनुरोध है कि हमे रंग पर इतना अधिक ध्यान नही देना चाहिये।

मैं ने अपने पिछले पत्र मे महाराजा की जो चर्चा की थी, उसे आप बिल्कुल गलत समझे। सच बात तो यह है कि मुझे महाराजा के बारे मे बहुत कम जानकारी है और मेरा ख्याल है कि मै सिर्फ एक बार ही एक समारोह मैं उन से मिला था। मुझे उन से कोई सरोकार नही है और न ही मै यह समझता हूं कि आजकल की व्यवस्था मे भारत के किसी भाग मे राजवश की परम्परा के लिये कोई जगह है। फिर भी, जब हम किसी व्यक्ति की निन्दा करते हैं, तो हमें उस की अच्छाइयों

को —अगर वे उस में हों— नजरअन्दाज नहीं करना चाहिये। ऐसा प्रतीत होता है कि आप महाराजा का घृणित चित्र खीचते हैं। फिर भी यह वही राजा था, जिस ने अपने वर्ग से ऊपर उठकर आज से बीस वर्ष पहले लन्दन मे गोलमेज कांफ्रेंस के समय, यह कहने का साहस किया था कि अंग्रेज को भारत की राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने की मांग के प्रति प्रगतिशील मांग अपनाना चाहिये। यह तो इतिहास बताता है कि इस कारण ही वह भारत में अंग्रेज अधिकारियों की आंख का कांटा बन गये थे। उन्हों ने भयानक गलतियां की होंगी और ऐसी चीजे की होंगी जो किसी समय राज्य के कल्याण और भारत के राष्ट्रीय हित के विरुद्ध गई। लेकिन, यह सच है कि उन की अन्तिम कार्यवाही से भारत सरकार को और आप को अपने मुख्य उद्देश्य की प्राप्ति में सहायता मिली। आप ने इस बात की चर्चा की है कि महाराजा उस समय श्रीनगर छोड़ कर चले गये, जबकि शहर पर हमला होने ही वाला था। यह आरोप उचित और उपयुक्त नही है। मैं ने कुछ कागजात देखे है और कई निष्पक्ष सूत्रों से यह सुना है कि यह गलत है, और लार्ड माउन्टबेटन और दूसरे नेताओं की इच्छाओं पर ही उन्हें श्रीनगर छोड़ने को कहा गया था। इस का एक स्पष्ट कारण यह था कि कुछ दिखावे की बातो को अन्तिम रूप देना था और यदि किसी प्रकार श्रीनगर का पतन हो जाता और महाराजा पकड़े जाते, तो ऐसा नही किया जा सकता था। यह सम्भव नहीं है कि आप यह तथ्य नही जानते। कुछ विशेष कारणों से आप और आप का परिवार भी काश्मीर से बाहर था। क्या इस सब के कारण बताने की इस समय कोई जरूरत है ?

फिर क्या सितम्बर सन् १९४७ में आप ने स्वयं महाराजा को एक पत्र नहीं लिखा था, जिस में आप ने उन को यह आश्वासन दिलाया था कि आप और आप की पार्टी उन के प्रति, उन की गद्दी के प्रति और उन के वंश के प्रति कभी भी बेवफादारी की भावना नहीं आने देगी ? क्या आप ने फिर मार्च सन् १९४८ में, जब आप से सत्ता संभालने को कहा गया था, महाराजा को यह नही लिखा था कि आप उन की पूरी सहायता और सहयोग चाहेगे और आप उन की उस भावना की सराहना करते हैं, जिस से प्रेरित हो कर उन्हों ने आप को वह पद संभालने को कहा था? यह निश्चित है कि आप मार्च सन् १९४८ के बाद की किसी भी अभद्र और अत्याचारपूर्ण कार्रवाई के लिए महाराजा पर आरोप नही लगा सकते। उस समय स्वयं महाराजा के फैसले से सारी सत्ता आप को सौंप दी गई थी। उस समय वह वास्तव में रबर-स्टाम्प का काम करते थे और उन्हें वही करना पड़ता था, जो भारत सरकार या आप चाहते थे। आप ने उन की गद्दी और उन के परिवार के प्रति वफादार रहने के जो आश्वासन निजी तौर पर दिए, उन के बावजूद आप ने भारत सरकार की पूरी सहायता से उन्हे उखाड़ फेकने की जल्दी से जल्दी कोशिश की। मैं इस बारे में कुछ नहीं कहना चाहता कि स्वामिभक्ति और आभार की भावना प्रकट करने के बावजूद यह सब किस तरह किया गया। शायद आप का यह दृढ़ विचार था कि जनता के हित के लिए महाराजा को यह बलिदान करना होगा। इस प्रकार अपने राजनीतिक लाभ और जैसा कि आप समझते थे, जम्मू और काश्मीर के हित के लिए, महाराजा का पूरा-पूरा फायदा उठाने के बाद अब आप पिछले इतिहास पर लीपा-पोती कर रहे हैं और सारा दोष महाराजा के सिर मढ़ रहे हैं। आप के लिए यह शोभा नहीं देता। आप सरीखे महान् नेता दयालु हो सकते हैं और यह जरूरी नहीं है कि वे अपने पिछले विरोधियों को भली-बुरी बातें कहें। मुझे आशा है कि आप इस सब के लिये मुझे क्षमा करेंगे।

लेकिन, यह आवश्यक सावधानी न बरतने से अक्सर अनावश्यक और मतभेद उत्पन्न हो जाते हैं। महाराजा का पद खत्म कर दिया गया है और वर्तमान आन्दोलन उस के पुनरुत्थान के लिये नहीं किया गया है। इस का उद्देश्य यह है कि सभी वर्गों के लोगों को पूर्ण लोक-राजवादी अधिकार प्राप्त हो जायें और अल्पसंख्यक लोग बिना किसी डर के रह सकें और समान अधिकार प्राप्त कर सकें। भारत के किसी भी भाग में अब महाराजा का निरंकुश शासन नही चल रहा है। जहां कहीं वे काम कर रहे हैं, वे वैधानिक प्रमुख के रूप में ऐसा कर रहे हैं और उन्हें कोई वास्तविक अधिकार प्राप्त नहीं है, उन्हें सिर्फ वही अधिकार मिले हैं, जो वे अपनी मन्त्रि-परिषदों की सलाह से प्राप्त करते हैं।

जहां तक कमीशन की रचना का सम्बन्ध है, आप ने मुझे बिल्कुल गलत समझा है। मैं ने आप के प्रधान न्यायाधीश की ईमानदारी के प्रति कोई बात नही कही है। मैं उन्हें व्यक्तिगत रूप से नहीं जानता, लेकिन मेरा विश्वास है कि वे ऐसे व्यक्ति होंगे जो कर्त्तव्य-पालन के मामले में किसी से भी प्रभावित नही होंगे। जैसा कि मैं ने श्री नेहरू को लिखा है, कमीशन के दूसरे सभी सदस्य शासनाधिकारी है, जो आप के नीचे काम कर रहे है। इन में एक एकाउन्टेंट-जनरल है, दूसरे चीफ़ कन्जरवेटर आफ फारेस्ट है और तीसरे रेवेन्यू कमिश्नर है। मैं उन्हे नही जानता। मेरा ख्याल है कि वे भी योग्यता और ईमानदारी से अपना कर्त्तव्य पालन करते हैं। लेकिन, वर्तमान परिस्थितियों में वे ऐसे लोग नहीं हैं, जो सरकारी नीतियों और शासन-व्यवस्था पर अपना फैसला दे सकें। भारत के दूसरे भागों मे जहां कही इसी तरह के संकट उठ खड़े होते है, जांच कमीशनों में जज ही होते है या उन के अधिकतर सदस्य न्याय व्यवस्था से लिये जाते हैं। कभी-कभी किसी विशेष राज्य से सम्बन्ध रखने वाले मामलों को जांच करने वाले कमीशन में भाग लेने के लिये बाहर के जज बुलाये जाते हैं। इसका मतलब उसकी सामर्थ्य आदि के बारे में कुछ कमी महसूस करना नहीं है। इसलिए, मैं ने श्री नेहरू को सुझाव दिया है कि वह आप से फिर ऐसा कमीशन बनाने को कहें, जिस में आप के प्रधान न्यायाधीश के अलावा भारत के दूसरे भागों के दो जज हों। क्या इस से आप को अपने न्यायाधीशों पर किसी प्रकार का आरोप लगाने या आप के अधिकारों को चुनौती देने का संकेत मिलता है? स्पष्टत: क्या आप की स्वायत्तता उस समय गडबडी में नहीं पड़ती, जब आप अपने ही नागरिकों को दंडित करने के लिये भारतीय पुलिस से काम लेते है? यदि आप खुद अपने शासन-प्रबन्ध मे सहायता देने के लिये कुछ भारतीय जजों की मांग करते है, तो फिर इसे आप क्यों एक चनौती समझते हैं?

क्या मे आप को याद दिला सकता हूं कि बीस वर्ष पहले जब महाराजा ने जम्मू और काश्मीर राज्य में हुए भीषण दंगों और झगडों की जांच के लिए एक कमीशन बनाया था, तब आप ने खुद क्या किया था? इन दंगों से आप की पार्टी यहां तक कि आप का नाम भी सम्बद्ध था। उस समय आप ने और आप के मित्रों ने कमीशन के साथ सहयोग करने से इन्कार कर दिया था, जब कि उस के प्रधान चीफ जस्टिस दलाल थे। आप ने सोचा होगा —और शायद सही सोचा होगा— कि ऐसे लोगों का कमीशन जिस में राज्य सरकार के अधिकारी है, लोगों की शिकायतों पर ठीक-ठीक विचार नहीं कर सकता और ठीक-ठीक फैसले नहीं दे सकता। अब, जब कि स्थिति बदल गई है और जब आज आ के हाथ में सत्ता आ गई है, तो आप यह महसूस क्यों नहीं करते कि आप की सरकारी नीतियों

और कामों से मतभेद रखने वाले लोगों को भी डर और सन्देह हो सकते हैं और वह सचमुच में निष्पक्ष और स्वतंत्र जांच के लिये चिन्तित हो सकते हैं ?

मैं यह समझने में असमर्थ हूं कि आप प्रजा परिषद् के प्रतिनिधियों के साथ क्यो बात चीत नही करना चाहते ? मैं ने यह सुझाव दिया है कि आन्दोलन खत्म कर दिया जाय और इसके बाद सम्मेलन किया जाय, जिस मे नेहरू, आप और प्रजा-परिषद् के कुछ प्रतिनिधि हो। इस सम्मेलन मे सभी राजनीतिक और वैधानिक मामले तय किये जाये और सन्देह और डर दूर करने और शान्ति और सद्भाव का वातावरण पैदा करने के लिये हर कोशिश की जाय। कैदियों को रिहा कर दिया जाय और जायदाद जब्त करने के तथा दूसरे ऐसे ही आदेश वापस ले लिये जाये। कमीशन फिर से बनाया जाय और वह आर्थिक और शासन प्रबन्ध सभी शिकायतों पर विचार करे। सभी सम्बन्धित पक्ष इस बात की कोशिश करें कि एक संयुक्त मोर्चा तैयार हो जाय, जिस से कि सभी के सहयोग से राज्य का निर्माण हो सके। कई मामलो के स्पष्टीकरण के बाद जुलाई समझौते को कार्यान्वित करने का काम तेजी से किया जाय। संविधान की सम्बन्धित बाकी बातों की पूर्ति जल्दी ही की जाय और इस के बाद चुनाव किये जाये।

मैं फिर पूछना चाहता हूं कि क्या यह तरीका ऐसा है, जिसे प्रतिक्रियावादी, साम्प्रदायिक और देशद्रोही कह कर, अमान्य ठहराया जाय ? प्रजा-परिषद् की बातो पर आप विश्वास क्यों नहीं करते और उन मामलों को निपटाने की कोशिश क्यो नही करते, जो खुद उन्हों ने उठाये हैं ? आन्दोलन सिर्फ उस के सदस्यो और समर्थको तक ही सीमित नही है। उस ने जनता की कल्पना को जगा दिया है और आप उसे बल-प्रयोग द्वारा नही दबा सकते। आप सब लोग गांधीवाद और गांधी जी के तरीके के इतने गुण गाते हैं। लेकिन, जब सकट आ उपस्थित होता है तो ऊंची भावनाये पीछे रह जाती हैं और धमकियां, अपशब्द, जेल, जब्ती, किरचें और गोलियां आप के अहिंसा के शस्त्र बन जाते हैं। यह दुर्भाग्य की बात है कि आप इस बात पर अड़ गये हैं कि आप किसी हालत में प्रजा परिषद् के सदस्यो के साथ बातचीत नही करेगे या उन से सरोकार नहीं रखेगे। लोक राजवाद के सिद्धान्तों पर चलने वाले नेताओं का यह रवैया आश्चर्यजनक है। प्रजा-परिषद् एक राजनीतिक दल के रूप मे बनी रहे या खत्म हो जाये, यह आप की इच्छा पर निर्भर नहीं करेगा। यह तो इस पर निर्भर करेगा कि उसे लोगो से क्या सहयोग प्राप्त होता है। यदि आप, जो राज्य की सब से बड़ी राजनीतिक पार्टी के प्रतिनिधि हैं और जिन के हाथ में आज सरकार की बागडोर है, किसी विशेष राजनीतिक दल को, जो आप का विरोध करता है, कुचलने के लिये दृढ़-प्रतिज्ञ हैं और इस के लिये बल और दूसरे तरीकों से काम लेते हैं, तो आप एक लोकराजवादी नेता नहीं रह जाते। तब आप एक तानाशाह बन जाते हैं। लेकिन फिर भी आप की सफलता संदिग्ध रहती है क्योंकि ऐसे सभी मामलों मे इतिहास ने यह सिद्ध किया है कि आन्दोलन गुप्त रूप धारण कर लेता है और अन्त मे महान तानाशाह सच्ची स्वतन्त्रता की लड़ाई मे हार जाता है। मैं यह कहने का साहस करता हूं कि आप जैसा नेता, जो महान् बलिदान और मुसीबतों का सामना करके इतना ऊंचा उठा है, इस प्रकार के खतरनाक और खुद को तबाह कर देने वाले तरीकों को स्वप्न में भी नहीं अपना सकता।

मेरा विश्वास है कि आप प्रजा-परिषद् के साथ पुराने सम्बन्धों और उस की पुरानी कार्यवाहियों के कारण ही बातचीत नही करना चाहते। आप ने खास तौर पर राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ का जिक्र किया है। मैं इस संस्था का सदस्य नहीं हूं। लेकिन, मै उस से सम्बन्ध रखने वाले कई लोगों को जानता हूं और मेरे दिल में उन के आदर्शों, देशभक्ति और बलिदान और सेवा की भावना के लिये बड़ा आदर है। हो सकता है कि उन्हों ने भूतकाल में कुछ गलतियां की हों। जैसा कि आप ने या मैंने भी कई अवसरों पर की होंगी। लेकिन, यह जरूरी नही है कि यह संस्था राष्ट्र की दुश्मन है। जम्मू और काश्मीर को छोड़, बाकी देश में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ पर से प्रतिबन्ध हटा लिया गया है। इस मे कोई सन्देह नही कि कुछ वर्ष पहले इस संस्था पर सभी प्रकार के आरोप लगाये गये थे। लेकिन, उन मे से एक भी अदालत या और किसी दूसरी जगह सिद्ध नही हुआ। उस के किसी भी कार्यकर्त्ता पर हिंसात्मक या विध्वंसक कार्रवाई करने का दोष नही लगाया गया और ना ही इस के लिए उन्हे कोई सजा दी गई। किसी निष्पक्ष अदालत ने भी उस के उद्देश्यों और काम के विरुद्ध कोई फैसला नहीं किया। गांधी जी की हत्या से ज़रा-सा भी उस का सम्बन्ध है– यह भी सिद्ध नही हुआ। यदि वह कुछ ऐसे आदर्शो का प्रचार कर रहा है, जो आप या कुछ दूसरे लोग पसन्द नही करते, तो आप को भी उस के विरुद्ध प्रचार करने का अधिकार है। यदि इस प्रकार जनता यह विश्वास कर ले कि राष्ट्रीय स्वय सेवक सघ बुरा है तो वह खुद उसे सहयोग नही देगी।

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ और प्रजा-परिषद् के विरुद्ध आप ने एक खास आरोप यह लगाया है कि अक्टूबर सन् १९४७ के भाग्य निर्णायक दिनों में, उन्हों ने जम्मू के कुछ इलाकों मे मुसलमानों को शक्ति का प्रयोग कर बाहर निकालने, यहां तक कि उन्हे मार डालने और उन की इज्ज़त खराब करने जैसी बड़ी नीचता का काम किया। मेरे लिये यह संभव नही है कि इस आरोप की सचाई के समर्थन मे मै प्रमाण प्राप्त करू। यदि कुछ खास लोगों ने ऐसे काम किये है और उन का पता चल गया है तो मुझे मालूम नही होता कि उन्हे आप के सत्ता सभालने के बाद क्यों अदालत के सामने पेश नही किया जाता? इस के तुरन्त ही बाद क्यों जांच-कमीशन नहीं बिठाया गया? फिर भी में आप की बात सच मान लेता हूं। क्या मैं आपसे यह पूछ सकता हूं कि आप उन परिस्थितियों की उपेक्षा क्यो करते है, जिन के अधीन इस तरह की दुखद घटनाये आप के राज्य मे घटी? आप ने उस दुखद घटना का जिक्र ही नही किया, जो जम्मू के हिन्दू और सिखो पर, मुसलमानो पर हमला किये जाने से पहले घटी? इन इलाकों मे पाकिस्तानी आक्रमणकारियों और जम्मू के मुसलमानों की संयुक्त कार्रवाई के फलस्वरूप १५-२० हजार हिन्दू निर्दयता के साथ मार डाले गये थे। इस पर भी आज पांच हजार हिन्दू औरतों का कोई पता नही चला है और उन की वापसी नही हुई है। बहुतों के साथ बर्बरता का व्यवहार किया गया और जबरदस्ती की गई। निर्दोष हिन्दू और सिखों के साथ हर प्रकार का बर्बरता-पूर्ण व्यवहार किया गया। स्पष्ट है कि हिन्दू और सिखों ने ये हत्याये नही की थीं। ये मुसलमानों ने की थी। उस समय आप नेशनल कान्फ्रेंस के माने हुए नेता थे। क्या आप सच्चे दिल से यह कह सकते है कि आक्रमणकारियो में, जो सब के सब मुसलमान थे, राज्य की सब से बड़ी पार्टी आप की नेशनल कान्फ्रेंस का कोई भी सदस्य नही था? उस समय आप दिल्ली या और किसी दूसरी जगह क्यों ठहरे हुए थे और हिन्दू और सिक्खों को इस भयंकर अत्याचारों से बचाने के लिये आप इस त्रस्त इलाके में क्यों उपस्थित

नहीं थे ? गांधीवाद के सिद्धान्तों के अनुसार आप ने उस समय वीरता के साथ लोगों का सामना क्यों नही किया ? मुसलमानों पर आक्रमण उस समय शुरू हुए, जब ये अत्याचार खत्म हो चुके थे और हज़ारों की तादाद में शरणार्थी विभिन्न जगहों मे तितर-बितर हो चुके थे और अपनी मुसीबतों और अपमान की कहानी सुना रहे थे ।

मैं आप से अनुरोध करता हूं कि आप क्षणभर के लिये भी मुझे गलत न समझे। मैं इन दोनों मे से किसी भी घटना को ठीक नही समझता । बुराई का बुराई से जवाब देना उचित नहीं होता । आप को और हमे यह देखना है कि भारत में भविष्य में फिर ऐसा रक्तपात न हो। मेरा मुख्य उद्देश्य यह है कि यदि हम भारत का कल्याण चाहते है, तो हमे उन बुरे दिनों की याद भुला देनी है। आप के इन घटनाओं के एक ही पहलू की बार-बार चर्चा करने से मुझे सोचना पड़ा है कि आप कब इन घटनाओं को भूल कर, राज्य और देश के हित के लिये सब वर्गों के लोगों को अपने साथ ले कर चलेंगे ? देश के बाकी भाग में क्या हुआ ? मेरे खुद के राज्य बगाल में क्या हुआ ? क्या अगस्त सन् १९४६ मे कलकत्ता शहर में हजारों हिन्दुओं की निर्मम हत्या नही की गई और यह भी मुस्लिम लीग मन्त्रिमंडल और अंग्रेज़ गवर्नर के राज्यकाल मे ? इसके बाद हिन्दुओं ने इस का जवाब दिया । दो महीने बाद ही क्या नोआखली जिले मे ३० हजार हिन्दुओं का जबरदस्ती धर्मपरिवर्तन नही किया गया ? सैंकड़ों औरतों के साथ अत्याचार नहीं किये गये और बहुत से व्यक्तियों को नही मारा गया ? क्या आप यह कहना चाहते हैं कि मैं हमेशा ही अपने दिल में पश्चिम बंगाल के मुसलमानों के विरुद्ध उन के सन् १९४६-४७ के कामों के लिए घृणा और प्रतिकार की भावना जगाये रखूंगा ? इसी तरह की बातें भारत के कई दूसरे भागों के बारे मे भी कही जा सकती है । आज इन मे से बहुत से लोगो को सफेद टोपी वाला कांग्रेसी मान लिया गया है और उन के कुछ नेता जिन पर दंगों और हत्याओं को संगठित करने के गंभीर आरोप लगाये गये थे, महत्वपूर्ण पदो पर बैठे हुए है । इसी प्रकार भारत के कुछ भागों के मुसलमान इसी समय में हिन्दुओं द्वारा किये गये अत्याचारों के लिये, शायद उन के प्रति घृणा की भावना बनाये रखे । भारत में उस समय दुश्चक्र चल रहा था । हमले का जवाब हमले से दिया जा रहा था और हम सर्वनाश के पास पहुंच गये थे । यह सच है कि जिन इलाकों में हिन्दुओ पर बड़ी मुसीबत पड़ी, वे अब पाकिस्तान में हैं और आज भी वहां के अल्पसंख्यक मुस्लिम लीगी सरकार के हाथों भारी मुसीबतें झेल रहे हैं और श्मशान भूमि की शान्ति की हालत में दिन गुजार रहे है। भारत के कितने मुसलमान नेताओं ने उन के इस दुर्भाग्य पर नाम मात्र के लिये भी सहानुभूति प्रदर्शित की ?

जहां तक जम्मू और काश्मीर के सहित भारत के निवासियों का सम्बन्ध है, हमें इस अध्याय को समाप्त समझना चाहिये और एक दूसरे की ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाना चाहिये जिस से कि हम एक ऐसे देश का निर्माण कर सकें जिस मे कि धर्म का उद्देश्य लोगों को अलग-अलग करना नहीं बल्कि पारस्परिक सम्मान और सूझबूझ पैदा करना हो और जहा सभी लोग एक मातृभूमि के समान नागरिकों की तरह काम करें और विकास के लिये समान अधिकार और अवसर प्राप्त हों ।

यदि हम पिछली बातें सोचते रहे और हम ने विश्वास और सद्भाव का वातावरण पैदा नहीं किया तो हम स्वयं राष्ट्र की कब्र खोदेंगे । लेकिन यदि कोई वर्ग या व्यक्ति इस विश्वास के प्रति

आंघात करता है तो उसे कानून के अनुसार उस के अपराधों की सज़ा दी जायेगी और इस में पुरानी रंजिश और पुराने अपराधों पर ध्यान नहीं दिया जायेगा ।

मै इस के साथ ही एक विवरण भेज रहा हूं जिस में यह बताया गया है कि अधिकारियों ने क्या-क्या अत्याचार और ज्यादतियां की हैं। मेरे पास इन की पुष्टि के लिये कोई साधन नही है और न ही आप की इन्कारी या आप के विभाग के किसी अफसर की रिपोर्ट ही इन का जवाब दे सकती है। यदि इन मे से आधी बातें भी सच हैं तो उन से गभीर स्थिति पैदा हो जाने का संकेत मिलता है। सिर्फ एक निष्पक्ष जांच से ही सत्य का पता चल सकता है।

मेरा आप से दिल से यह अनुरोध है कि आप अब भी ये बातें बन्द कर दें। दमन से समस्या हल नही होगी। इस से घृणा और कटुता पैदा होगी, जिसे दूर करना सरल नहीं होगा। विरोधी लोगो से, जो आज जेलों में है, बातचीत करने से इन्कार करने से समस्या का निपटारा नहीं हो सकेगा। हमें आन्दोलन को समाप्त अरने की तरकीबे करनी हैं और नये सिरे से काम शुरू करना है। मैं यह जानता हू कि जम्मू के बहुत से लोगों को क्या डर और सन्देह हैं। इसलिये मुझे विश्वास है कि यदि आप समय के अनुसार काम करे और एक सम्मेलन करने की बात मान जाये, तो पारस्परिक सद्भाव और शान्ति कायम हो सकती है और सभी लोग विकास और समृद्धि का नया अध्याय शुरू कर सकते हैं। यदि आप ऐसा करे तो आप की प्रतिष्ठा कम नही होगी बल्कि अपनी राजनीतिज्ञता और वास्तविकता की भावना से आपको सभी का सम्मान प्राप्त हो जायेगा ।

मै ने इसे अपना कर्त्तव्य समझा था कि आप के साथ यह पत्र-व्यवहार शुरू करूं, क्योंकि मेरा ख्याल था कि एक योद्धा होने के नाते आप उन लोगो के साथ भी सही व्यवहार करेगे, जिन से आप के भारी मतभेद है। अब तक मै आप के विचारो मे परिवर्तन लाने मे असमर्थ रहा हूं। आज आप के पास सत्ता है और आप के सही पहल करने पर बहुत कुछ निर्भर करता है। मै इस भारी खेद के साथ यह पत्र-व्यवहार बन्द करता हूं कि हम भयंकर खतरे को सामने देखते हुए भी समझौता न कर सके।

आप का हितेच्छु,
(ह०) श्यामाप्रसाद मुकर्जी

शेख मुहम्मद अब्दुल्ला,
मुख्य मंत्री,
जम्मू और काश्मीर

शेख साहब का उत्तर

जम्मू तवी,
२५ फरवरी, १९५३

प्रिय डाक्टर साहब,

आप का २३ फ़रवरी का पत्र और उस के साथ जम्मू में तथाकथित "पुलिस अत्याचारो" की रिपोर्ट मिली। जैसा कि आप की चिट्ठी के अन्तिम पैरे से सकेत मिलता है, आप ने इस पत्र-व्यवहार को और लम्बा न बढ़ाने का फैसला किया है; इसलिये मुझे आप की चिट्ठी मे उठाई गई भिन्न-भिन्न बातों का ब्यौरेवार जवाब देने की जरूरत नही है। लेकिन, मै आप को दिल से इस बात के लिये धन्यवाद देता हू कि आप ने मुझे यह जानने का अवसर दिया कि आप का दिमाग कैसे चलता है। वास्तव मे खेद तो मुझे होना चाहिये, क्योंकि भरसक प्रयत्नो के बावजूद मै आप की विचार-धारा मे परिवर्तन लाने मे असफल रहा। लेकिन, इस से हमारे बीच कोई कटुता पैदा नही होनी चाहिये। हमे अलग-अलग विचार रखने पर राजी हो जाना चाहिये और इस बात का निर्णय आगे वाली पीढ़ियों पर छोड देना चाहिये कि हम ने क्या उचित किया और क्या अनुचित।

शुभेच्छा के साथ—

आपका शुभेच्छु,
(ह०) एस० एम० अब्दुल्ला

डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी,
संसद् सदस्य,
३०, तुगलक क्रेसेंट,
नई दिल्ली